MOTION *BE*

I. THE REPORT OF THE EDUCA TION COMMISSION (1964—66).

II. THE REPORT (1967) OF THE COMMITTEE OF MEMBERS OF PARLIAMENT ON ERUCATION—*Continued.*

THE DEPUTY CHAIRMAN: We now come to the discussion of the Report on Education. Those who want to go for lunch may go. Mr. Ganga Sharan Sinha.

SHRI GANGA SHARAN SINHA (Bihar): Madam Deputy Chairman, there was no previous notice that there would be no lunch today. We were simply told that we would sit till 5.30. We were not informed that there would be no lunch.

THE DEPUTY CHAIRMAN: I would like to put to the House whether we can adjourn now and meet again at 2.

SHRI RAJENDRA PRATAP SINHA (Bihar): It is much better UJ adjourn now and extend the sitting beyond 5. It is now 1.25 or whatever it may be. Shri Ganga Sharan Sinha is a very important Member of this House and his views should be heard by the House when we assemble after lunch so that there may he some Members.

THE DEPUTY CHAIRMAN: I am in the hands of the House. There are ' very important Members still to speak and the Congress list is far too long and it will never be exhausted.

SHRI RAJENDRA PRATAP SINHA: We can meet at 2-30 and extend the sitting till 5-30.

THE DEPUTY CHAIRMAN: When will the Minister reply.

SHRI NIREN GHOSH (West Bengal) : Tomorrow,

PANDIT S. S. N. TANKHA (Uttar Pradesh): Keep it for tomorrow.

THE DEPUTY CHAIRMAN: There is one Minister who wants to intervene. I am in the hands of the House.

SHRI NIREN GHOSH: Let us meet at 2.30 . . .

THE DEPUTY CHAIRMAN: The Minister will reply at 5-30. B"t my request to the Members is that Jiey will have to be brief and to the point.

The House stands adjourned till 2-30.

The House then adjourned for lunch at twenty-five minutes past one of the clock.

The House reassembled after lunch at half-past two of the clock. *The* VICE-CHAIRMAN (SHRI RAM NIWAS MIRDHA) in the Chair,

श्री गंगा शरण सिंह : माननीय उप-सभाध्यक्ष महोदय, शिक्षा सबंधी जिस कमीशन की रिपोर्ट हमारे सामने पेश है यह पहला कमीशन नहीं है जो भारत सरकार ने बनाया। आजादी मिलने के बाद से सरकार की ओर से कई कमीशन बनाये गये, लेकिन उन कमीशनों में और इस कमीशन में अन्तर रहा। पहले जो कमीशन बनाये गये वे किसी खास विभाग के लिये, किसी खास क्षेत्र के लिये बनाये गए, कोई युनीवर्सिटी के लिये बनाया गया, कोई प्राइमरी एजूकेशन के लिये बनाया गया और इस तरह से अलग-अलग विभागों के लिये कमीशन बनाये गये। यह पहला कमीशन है जो पूरी शिक्षा पद्धति के बारे में राय देने के लिये बनाया गया आजादी के बाद इस सम्बन्ध में यह पहला कदम उठाया गया है।

मुझे इस कमीशन के निर्माण के संबंध में दो शिकायतें हैं। एक तो यह है कि यह कमीशन आजादी के 17–18 वर्ष बाद क्यों बनाया गया। उचित तो यह था कि अगर हम चाहते थे कि आजादी के बाद हमारी शिक्षा पद्धति में सुधार हो तो उसी समय इस संबंध में कार्यवाही करते। आजादी के आन्दोलन के दरम्यान बार-बार यह कहा गया, बार-बार यह नारा लगाया गया कि हमारी शिक्षा पद्धति खराब है। कई आधार ऐसे थे जिन पर हमने आजादी के आन्दोलन को खड़ा किया था, हमारा यह भी मत था कि अंग्रेजों ने जो शिक्षा पद्धति चलाई थी वह हमारे देश के अनुकूल नहीं थी, लेकिन आजादी के प्राप्त करने के बाद 17–18 साल हो गये शिक्षा पद्धति के संबंध में जांच करने के लिये, अपनी राय देने के लिये इस तरह का कदम नहीं उठाया गया।

दूसरी शिकायत मुझे इस कमीशन के संबंध में यह है कि जहां तक मेरी जानकारी है, हमारे देश में शिक्षाविदों की कमी नहीं है, शिक्षा विशेषज्ञों की कमी नहीं है, शिक्षा–शास्त्रियों की कमी नहीं है, लेकिन यह जो कमीशन बना इसमें दूसरे देशों के लोग लाये गये उनकी विद्वता और उनकी दूसरी खूबियों के लिये पूरी श्रद्धा रखते हुए मैं यह कहना चाहता हूं कि हमारे देश की शिक्षा पद्धति के निर्माण के लिये, उसके संबंध में नीतियां बनाने के लिये, कार्यक्रम तैयार करने के लिये यह आवश्यक नहीं था कि दूसरे मुल्कों से इतने लोगों को बुलाया जाता। हमारे देश के जो शिक्षा-शास्त्री हैं वे हमारे देश की शिक्षा के संबंध में, यहां के वातावरण के संबंध में, यहां की आवश्यकताओं के संबंध में जानते रहे हैं और इतना ही नहीं है, दूसरे देशों की जो शिक्षा–पद्धतियां हैं उनके बारे में भी हमारे शिक्षा-शास्त्रियों की जानकारी कम नहीं है, प्रायः सभी देशों के बारे में हमारे शिक्षा विभाग में और शिक्षा के क्षेत्र में काम करने वाले जानते रहे हैं। ये दो चीजें हैं, एक तो बहुत देर से यह चीज आई, दूसरे इसमें जो लोग लिये गये उनको न लिया जाता तो अच्छा था।

श्री अकबर अली खान (आन्ध्र प्रदेश): बराए नाम दो तीन बातें।

श्री गंगा शरण सिंह: दो-तीन ही नहीं और भी है।

सबसे बड़ी बात यह है शिक्षा के सम्बन्ध में कि हमने 18 वर्षों तक एक तरह से उस तरफ ध्यान नहीं दिया। अगर हम इसकी पृष्ठभूमि में जायें तो पता चलेगा कि ब्रिटिश गवर्नमेंट ने अपने दृष्टिकोण से ही किया हो, लेकिन ब्रिटिश राज ने, और ब्रिटिश राज ने ही नहीं, ईस्ट इंडिया कम्पनी तक ने शिक्षा के सम्बन्ध में ध्यान दिया था। 1854 ई० में ब्रिटिश ईस्ट इंडिया कम्पनी ने सारे भारतवर्ष के लिए शिक्षा की नीति की घोषणा की थी। यह ठीक है कि उनका अपना दृष्टिकोण था, लेकिन उस दृष्टिकोण में भी जो यहां की परिस्थिति के अनुसार समझा था उसकी घोषणा की थी। 1854 ई० की जो घोषणा हुई उसमें 1857 के आन्दोलन के चलते, उस समय जो क्रान्ति हुई उसके कारण पूरी कामयाबी नहीं हो सकी और उसका परिणाम यह हुआ कि 1859 में उसके लिए एक इन्क्वायरी कमेटी बिठाई गई। उस इन्क्वायरी कमेटी की रिपोर्ट आने के बाद फिर उस पर कार्यवाही हुई। कार्यवाही करने के बाद 1881 में दूसरा कमीशन बिठाया गया और इस कमीशन की जो रिपोर्ट आई उसके आधार पर 1884 में फिर सरकार ने शिक्षा के सम्बन्ध में नीति की घोषणा की। उसके बाद दूसरी घोषणा हुई 1904 में और तीसरी घोषणा

[श्री गंगा शरण सिंह]

हुई 1913 में। 1913 के बाद शिक्षा के सम्बन्ध में न तो ब्रिटिश गवर्नमेंट ने कोई घोषणा की और न हमने ही आजादी के बाद ऐसा कुछ किया। आज पहली बार सामूहिक रूप से, सम्पूर्ण रूप से शिक्षा के संबंध में, उसकी नीति के सम्बन्ध में कोई घोषणा हुई है। मैं समझता हूं कि इतने दिनों का जो गैप हुआ, इतने दिनों का जो अवकाश हुआ, वह आइन्दा नहीं होना चाहिए।

मुझे यह प्रसन्नता है कि हमारे शिक्षा मंत्री ने कमीशन की जो रिपोर्ट आई उस पर इतनी जल्दी से, इतनी मुस्तैदी से कार्यवाही की है, उसे संसद-सदस्यों की समिति के सामने रखा और तीन महीने के भीतर संसद-सदस्यों की समिति की जो रिपोर्ट है उसको भी संसद के सामने रखा। मुझे इस बात की भी प्रसन्नता है कि सरकार ने इस पर अपनी कोई राय कायम करने के पहले संसद को मौका दिया है, राज्यों को मौका दिया है और लोगों को मौका दिया है कि जो रिपोर्ट आई है संसद-सदस्यों की और शिक्षा आयोग की, उसके सम्बन्ध में अपनी राय दे सकें। उन लोगों के राय देने के बाद उस राय की रोशनी में सरकार अपना निर्णय करे, यह अच्छा निर्णय है ; नहीं तो बहुत बार ऐसा हुआ करता है कि कोई रिपोर्ट आई, सरकार के पास गई और सरकार ने उतावली में कोई राय कायम कर ली और उस राय को फिर जड़ भरत की तरह ऐसे पकड़ रही है कि कोई अक्ल की बात कीजिए तो भी टस से मस नहीं होती। इस दृष्टि से सरकार ने जो मौका दिया, बिना अपनी राय जाहिर करते हुए, मैं समझता हूं कि यह एक अच्छी और नई परम्परा है। शिक्षा विभाग में ही नहीं, दूसरे विभागों में भी यह परम्परा रहनी चाहिए और कायम होनी चाहिए।

महोदय, हमारे सामने जो रिपोर्ट है उसके चार भाग हैं—पहला भाग है शिक्षा के उद्देश्य के सम्बन्ध का दूसरा भाग है नीति के सम्बन्ध का, तीसरा भाग है पद्धति के सम्बन्ध का और चौथा भाग है कार्य के सम्बन्ध का। और कार्य के सम्बन्ध का जो भाग है उसके दो हिस्से हैं, एक तो है तात्कालिक कार्यक्रम, दूसरा है पूर्ण कार्यक्रम। जैसी कि बिहारी दास ने आशंका प्रगट की थी, मुझे दुःख के साथ कहना पड़ता है कि उनकी आशंका सही साबित हुई है। कल उन्होंने बहस के दौरान कहा था कि जिस परिस्थिति में, जिस तरह से यह आया है उसमें खतरा इस बात का है कि लैंग्वेज के सम्बन्ध में, भाषा में ही अधिक बहस होगी और जो रिपोर्ट के मुख्य अंग हैं वे नजर अन्दाज हो जाएंगे, उनकी उपेक्षा हो जायगी। कल से आज तक मैं यही देख रहा हूं कि भाषा के सम्बन्ध में ही ज्यादा जोर डाला जा रहा है भाषा के सम्बन्ध में ही ज्यादा विचार व्यक्त किए जा रहे हैं, जो उद्देश्य, नीति और पद्धति का भाग है उस पर उतना जोर नहीं डाला जा रहा है।

एक बात की खुशी भी मुझे है कि इस रिपोर्ट को आप देखेंगे तो पता चलेगा कि जितने लोगों ने इस पर अपनी असहमति जाहिर की है, नोट आफ डिस्सेन्ट दिया, तादाद उनकी 8–9 है, लेकिन अगर आप उसका विश्लेषण करें तो आपको पता चलेगा कि सिर्फ तीन-चार विषय ऐसे हैं जिनमें मुख्यतः लोगों ने अपनी असहमति जाहिर की है और एक-एक विषय पर असहमति जाहिर करने वालों की संख्या 4–5 से ज्यादा नहीं है। समिति की जो रिपोर्ट है, असहमति की रिपोर्ट भी आकार-प्रकार में उसी के जैसी है; किसी किसी को उससे भय सा उत्पन्न होता है कि जितनी बड़ी रिपोर्ट है उतना ही बड़ा नोट आफ डिस्सेन्ट है। नोट आफ डिस्सेन्ट में सबसे बड़ा महन्त दिग्विजय नाथ का है। वह बहुत ही अच्छा लिखा हुआ है। उसके विचारों के साथ कोई सहमत हो या न हो लेकिन यह मानना पड़ेगा कि उस नोट के लिखने में काफी परिश्रम किया गया है। मेरी दृष्टि में जरा सी दिक्कत की बात यह आती है कि वह नोट आफ डिस्सेन्ट

नहीं है, वह शिक्षा आयोग की आलोचना है। शिक्षा आयोग पर एक थीसिस है, शिक्षा आयोग पर एक कमेन्ट है। उसमें जो विषय लिए गए हैं वे बहुत अच्छे हैं, उन पर परिश्रम किया गया है, उसके अन्दर जो विचार व्यक्त किए गए हैं उनके लिए तैयारी की गई है। उनके विचारों से मतभेद रखते हुए भी मैं यह मानता हूं। अगर सही मानों में दोनों को लेकर कोई पढ़ेगा तो पता चल जायगा कि वह नोट आफ डिस्सेन्ट नहीं है, शिक्षा आयोग पर एक तरह का कमेन्ट है।

उपसभाध्यक्ष महोदय, शिक्षा के उद्देश्य के संबंध में जब हम सोचते हैं तो सबसे बड़ी बात जो सामने आती है वह यह है। हम एक जनतांत्रिक देश में रहते हैं, हम शातिमय तरीकों से अपने उद्देश्यों को हासिल करना चाहते हैं। प्रश्न यह उठता है कि यह जनतांत्रिक शांतिमय तरीका सिर्फ राजनीतिक क्षेत्र तक सीमित रहेगा। सिर्फ आर्थिक क्षेत्र तक सीमित रहेगा या समाज और शिक्षा के क्षेत्र में भी प्रवेश करेगा? अगर हम यह चाहते हैं कि जनतांत्रिक तरीका सिर्फ राजनैतिक और आर्थिक सीमा तक केन्द्रित नहीं रह जाय और समाज और शिक्षा में उसका प्रवेश हो तो शिक्षा की दिशा हमको बदलनी होगी, शिक्षा का दृष्टिकोण हमको बदलना होगा। इस के लिये सबसे पहले यह स्पष्ट करना होगा कि वह शिक्षा किस के लिये है किस प्रकार की है, किस तरह की है। यह शुरू में कहना होगा। आज तक हुआ क्या है। मेरे मित्र कहते हैं कि तोतारटंत की तरह बार बार उद्देश्य और सिद्धांत की बातें दोहराई जाती हैं। यह कह कर सिद्धान्त की चर्चा का मजाक उड़ाया जाता है। मैं कहना चाहता हूं कि अभी आखिर गनीमत है कि सिद्धांत की बात दोहराई तो जाती है, अभी वह परिस्थिति तो नहीं आई है कि सिद्धांत की बात कहने के लिये जीभ तराश दी जाय। सिद्धांत की बातों को लोग भूल जांय। इसलिये मैं तो चाहूंगा कि सिद्धांत की बात चाहे एक आदमी के दिल में भी आती हो उसे बराबर कहते रहना चाहिये। आज वह जमाना है जब कि उसके ऊपर ध्यान देने वाले नहीं, हां, तिस पर हमें बराबर चिराग जलाते रहना चाहिये ताकि रोशनी फैल सके। इसलिये शिक्षा के सम्बन्ध में सिद्धांत की बात दोहराई जाती है, उसको बेवकूफी की बात नहीं समझनी चाहिये, उसको यह एक पिष्टपेषण नहीं समझना चाहिये और यह नहीं समझना चाहिये कि कोई गलत काम किया जा रहा है। हम चाहते हैं कि शिक्षा के सम्बन्ध में हमारा दृष्टिकोण जनतांत्रिक हो, डेमोक्रेटिक हो और शिक्षा में कोई वेस्टेड इंटरेस्ट, निहित स्वार्थ नहीं रह जाय। तो शिक्षा की पद्धति में हमें आमूल परिवर्तन करना पड़ेगा और सब से पहला काम, सब से बड़ी चीज जो इस रिपोर्ट में करने की चेष्टा की गई है वह यह है कि हमने शिक्षा पर एक मुख्य उद्देश्य भी कायम करने की कोशिश की है, जिसका रूप पहले के बहुत से उद्देश्यों से थोड़ा सा भिन्न है और आज की हमारी जो मान्यता है, आज का हमारा जो समाज है, आज के हमारे जो सिद्धांत हैं, उनके अनुकूल बनाने की कोशिश की है। क्या हुआ है? जैसे कि अभी तक आर्थिक जगत में, जैसे कि अभी तक राजनैतिक जगत में, हमारे यहां निहित स्वार्थ के कुछ लोग हैं और कुछ ऐसे लोग हैं जिनका कोई स्वार्थ रक्षित नहीं रह गया, ऐसा ही हमारे दुर्भाग्य से शिक्षा के क्षेत्र में भी हुआ। शिक्षा पैसे से खरीदने वाली चीज़ बन चुकी है। परिणाम यह हुआ कि सिर्फ आर्थिक जगत में ही हमारे यहां स्तर नहीं हो गये थे, क्लासेज नहीं बन गये थे, श्रेणियों का निर्माण नहीं हो गया था, बल्कि शिक्षा के क्षेत्र में भी श्रेणियों का निर्माण हुआ और क्लासेज बन गये और उसका परिणाम यह हुआ कि कुछ लोग जिनके पास साधन हैं, जिनके पास जरिया है, जिनको सहूलियत है, उनका एक वर्ग निकल आया, भिन्न भिन्न वर्गों में से एक ऐसा वर्ग निकल आया, वह वर्ग राजनीतिज्ञों में से निकला बड़े बड़े व्यापारियों में से निकला, बड़े बड़े सरकारी अफसरों में से निकला, जिन्होंने सिर्फ

[श्री गंगा शरण सिंह]

राजनीति को अपनी सत्ता में, अपने हाथ में नहीं किया बल्कि जिन्होंने शिक्षा को भी अपने हाथों में किया और आज परिस्थिति यह हो गई है कि एक साधारण हैसियत के आदमी के लिये अपने बच्चों को शिक्षा देना चाहे उसका बच्चा तेज से तेज हो, अच्छा से अच्छा हो, कठिन ही नहीं, मुश्किल हो गया है, सम्भव नहीं रह गया है। इसलिये आज जब शिक्षा के बारे में कोई बात करेंगे और जनतांत्रिक बात करेंगे तो सब से पहली बात यह करनी होगी, बहुत सी बातों को छोड़ कर कि शिक्षा सब के लिये सुलभ हो, शिक्षा सिर्फ पैसे के आधार पर सुलभ नहीं बनी रहे, जिनके पास पैसा है उनको ही सुलभ नहीं रहे, सब को सुलभ हो, जिसको कि पढ़ने की ख्वाहिश है, पैसा हो या न हो, उसको शिक्षा सुलभ होनी चाहिये। जो पुरानी शिक्षा पद्धति थी उसमें यह नहीं था। सब से पहला दृष्टि-कोण शिक्षा को सुलभ बनाने का है, सब से पहले शिक्षा को सुलभ बनाने के लिये कदम उठाना पड़ेगा। शिक्षा को भी हमें जनतांत्रिक डेमोक्रेटिक बनाना पड़ेगा।

सवाल उठता है कि वह जनतांत्रिक बनेगी, उसे जनतांत्रिक बनायेंगे तो स्टैंडर्ड का क्या होगा। कुछ लोग कहते हैं कि जब कौमन प्राइमरी स्कूल में हमारे बच्चों को पढ़ना लिखना सिखाया जायेगा, वहां पर लिखाया पढ़ाया जायेगा, तो स्टैंडर्ड का क्या होगा? मैं अदब से कहना चाहता हूं कि यह स्टैंडर्ड का प्रश्न कितने लोगों के लिये है। यह स्टैंडर्ड का प्रश्न एक निहित स्वार्थ का प्रश्न है। ये स्टैंडर्ड वाले आज सौ में कितने हैं? दो फीसदी भी नहीं हैं जो कि उस विशेष शिक्षा को उपलब्ध कर सकते हैं जो कि उस विशेष शिक्षा से फायदा उठाते हैं। अगर हमारी शिक्षा जनतांत्रिक ढंग से चलने वाली है तो दो प्रतिशत या 1.8 प्रतिशत ऐसे होंगे जिनके लिये शायद स्टैंडर्ड का प्रश्न है लेकिन ये जो 98 परसेंट हैं इनका भी हमको सोचना है। इस दृष्टि से आज जो तथाकथित स्टैंडर्ड वाले स्कूल हैं उनका प्रश्न पीछे चला जाता है लेकिन जो प्राइमरी स्कूल हैं, बोर्ड के स्कूल हैं, म्युनिसिपैलिटी के स्कूल हैं उनका क्या हाल है, यह प्रश्न सामने आता है। आज जो बड़े लोग हैं, जिनके पास साधन हैं उनके लिये अलग स्कूल हैं, उनका समाज अलग है, उनके लिये सब चीजें सभी साधन अलग हैं, उपलब्ध हैं, आज उनके स्कूलों की भाषा अलग है और इधर किसी स्कूल के लिये मकान नहीं है, किसी के लिये सामान नहीं है, किसी के लिये उपयुक्त टीचर नहीं है, कहीं रहने को जगह नहीं है, पढ़ाई का स्टैंडर्ड नहीं है। तो असल में हमें इनको ऊंचा करना है। जब तक ऊपर का वर्ग क्लास बनाते जायेंगे तब तक नीचे का जो वर्ग है उसकी उपेक्षा होगी। इसलिये आज एक बीच का रास्ता निकालना है। जो ऐसे उपेक्षित लोग हैं वह आज सिर्फ शिक्षा की दृष्टि से उपेक्षित नहीं होते बल्कि आर्थिक और समाज की दृष्टि से भी उपेक्षित होते हैं। मुझे आश्चर्य हुआ एक जगह भर्ती के लिये लड़कों की जो परीक्षा ली गई उसको देख कर। एक स्कूल में, काफी अपटूडेट स्कूल में यह बात हुई। वहां देहात के लड़के भी आये, गरीबों के लड़के भी आये, बाहर के तथा धनियों के भी और उनकी समान परीक्षा ली गई। वहां टेलीफोन रखा गया यह देखने को कि लड़का टेलीफोन आपरेट करना जानता है या नहीं। यह देखा कि लड़का रेडियो चलाना जानता है या नहीं। ऐसी बहुत सी आधुनिक चीजें जो पैसे वालों को उपलब्ध हैं वह उस परीक्षा क्रम में रखी गईं। एक गरीब का लड़का टेलीफोन आपरेट करना कैसे जाने। जिसने रेडियो दूसरों के यहां शायद देखा होगा वह रेडियो आपरेट करना कैसे जानें। इसलिये मैं आपसे विनम्रता के साथ कहना चाहता हूं कि समान स्कूलों में जो थोड़ी सी

कठिनाई मालूम होती है वह इसीलिये कि निहित स्वार्थों का जो हित है वह हित आज खतरे में पड़ गया है। मैं आपसे कहना चाहता हूं कि उनकी तरफ से नजर हटा कर जो 98 प्रतिशत लोग हैं उनकी तरफ देखिये और तब आपको शिक्षा के क्रम में, शिक्षा की सारी चीजों में परिवर्तन की आवश्यकता पड़ेगी। इसलिये सबसे पहला दृष्टिकोण जो मैंने और मेरे साथियों ने रखा है वह यह है कि शिक्षा सबके लिये सुलभ हो और इसी कारण आप पायेंगे कि इस रिपोर्ट में यह भी कहा गया है कि जब कोई कर्म्पीटीशन हो, प्रतिद्वन्दिता हो तो क्या हो। आज कोई कर्म्पीटीशन होता है, कोई प्रतिद्वन्द्विता होती है, आप देख लीजिये उस प्रतिद्वन्द्विता में देहात से आने वाले और गरीबों के जितने लड़के होते हैं उनके लिये बहुत कम गुंजाइश होती है क्योंकि शहरों के स्कूलों का स्टैंडर्ड ऊंचा है, शहरों में सहूलियतें हैं, पैसे वालों को ज्यादा जानकारी है, इसलिये कि उनको सहूलियतें हैं और गरीब तथा देहात के बच्चों को इन चीजों की जानकारी नहीं होती है, उनको सुविधा नहीं मिलती है, साधन नहीं मिलता है चाहे कोई तेज से तेज बच्चा हो उसकी ऐसी प्रतिद्वन्द्विता में कोई गुंजाइश नहीं होती, इसीलिये आप पायेंगे कि इस रिपोर्ट में इस बात की चर्चा की गई है कि ऐसे जो कम्पीटिशन होते हैं, ऐसी प्रतिद्वंद्वितायें होती हैं वह क्षेत्र के हिसाब से अलग-अलग हों और क्षेत्र के हिसाब से जो बच्चे ऊपर आयें उनको पारितोषिक दिया जाय, प्रोत्सा न दिया जाय, उनके लिये गुंजाइश की जाय। सब के लिये एक नहीं रहे।

इस रिपोर्ट की दो मुख्य बातें हैं, एक तो यह कि शिक्षा का माध्यम क्या हो और दूसरी यह कि कामन स्कूल हों, नेबरहुड स्कूल हों। ये दो बातें रिपोर्ट की धुरी हैं, ये इसकी रीढ़ हैं जिस पर यह सारी रिपोर्ट आधारित है। मैं समझता हूं कि अगर हमारे देश में शिक्षा को जनता तक पहुंचाना है, सही मानों में सारे देश को शिक्षित करना है अगर हमारे देश में शिक्षा और समाज के क्षेत्र में समानता लानी है तो बिना क्षेत्रीय भाषाओं को शिक्षा का माध्यम बनाये हुये वह चीज नहीं आ सकती है। क्षेत्रीय भाषायें शिक्षा का माध्यम होंगी तभी देश में जितना जो टैलेंट है, जो तेजी है, उसको पूरी तरह से विकसित होने का, काम करने का मौका मिलेगा। दूसरी बात यह है कि जो लोग एक भाषा के चलते निहित स्वार्थ में बंध गये हैं, एक उनका निहित स्वार्थपन इससे खत्म होगा, उनको कामन आदमी साधारण आदमी की कतार में खड़े हो कर प्रतिद्वन्द्विता करनी पड़ेगी और तेजी नहीं होने पर भी भाषा के आधार पर जो विशेष लाभ मिलता है वह नहीं मिल सकेगा। इसलिये इसकी पहली धुरी यह है कि क्षेत्रीय भाषायें शिक्षा का माध्यम होनी चाहिये और तभी शिक्षा का जो उद्देश्य हम अपने सामने रखते हैं वह पूरा हो सकता है, उसके बगैर नहीं हो सकता है।

दूसरी बात यह कि आज क्या होता है, आप देखते हैं कि एक बंगले में रहने वाले साहब हैं। उनका लड़का चार मील मोटर पर चढ़ कर पढ़ने जाता है चाहे वह लड़का कितना ही डल से डल हो, बुरा से बुरा हो, मंद से मंद बुद्धि का हो, और दूसरी ओर एक तेज से तेज लड़का, उसी अहाते का एक मेहतर का लड़का है उसको सड़े से सड़े प्राइमरी स्कूल में जाना पड़ता है। अब अगर इसकी चर्चा होगी तो यहां कहा जायगा कि साहब के लड़के का स्टैंडर्ड खराब हो जायगा, स्टैंडर्ड किसका खराब होगा। उन मुट्ठी भर लड़कों का जो अपने पैसे के बल पर डलनेस, मंदबुद्धिता को छिपा कर आज तरक्की पाते हैं लाखों करोड़ों लड़कों के ऊपर। इसके लिये आप को पूरी चेष्टा करनी होगी और मेरा विश्वास है कि जहां साहबों के लड़के कामन स्कूल में गये तो उन स्कूलों का स्टैंडर्ड भी बढ़ेगा और फिर आप यह भी देखिये कि समिति ने कामन स्कूल के लिये सिर्फ प्राइमरी स्कूलों के लिये ही सिफारिश की है, सब के लिये कामन स्कूल की

[श्री गंगा शरण सिंह]

बात नहीं कही है. तो कौमन स्कूलों का स्टैंडर्ड भी बढ़ेगा और जो बंगलों में रहने वाले नाले के ऊपर बने हुये स्कूलों की उपेक्षा करते हैं उनके लड़कों को जब कौमन स्कूल में जाना पड़ेगा तो आप विश्वास कीजिये महीने भर में उन स्कूलों का रंग बदल जायगा, उसकी बिल्डिंग बदलेगी। स्टैंडर्ड बदलेगा, सारी चीजें बदलेंगी। आज स्थिति यह है कि जिनके पास पैसा है, साधन है, उनका उन स्कूलों में कोई स्वार्थ नहीं है, कोई दिलचस्पी नहीं है और उसका परिणाम यह हुआ है कि वे स्कूल नितांत उपेक्षित हैं और उनमें पढ़ाने और पढ़ने वाले जो हैं उनमें और जानवर में फर्क करना बहुत मुश्किल है। इसलिये आज शिक्षा के क्षेत्र में जनतंत्र का यह तकाजा है कि जैसे हम आर्थिक क्षेत्र में भेदभाव मिटाना चाहते हैं, नीचे और ऊपर के भाव को मिटाना चाहते हैं, जिस तरह से शोषक और शोषित के भेद को मिटाना चाहते हैं, उसी प्रकार शिक्षा में भी करना है क्योंकि शिक्षा के क्षेत्र में जो निहित स्वार्थ वाले हैं उनकी वजह से एक तरह से शोषक और शोषित का संबंध हो गया है। मैं आपसे यह कहना चाहूंगा जो थोड़ी बहुत दिक्कत आपको मालूम होती है उसके लिये आप 98 प्रतिशत की तरफ देखें, 2 प्रतिशत की तरफ नहीं देखें और इसीलिये शिक्षा के रूप और उद्देश्य के सम्बन्ध में जो ये दोनों सिफारिशें हैं उन सिफारिशों को आपको मानना चाहिये।

(Time bell rings)

SHRI AKBAR ALI KHAN: Mr. Vice-Chairman, he is the Chairman of the Parliamentary Committee. I would request you to give him more time so that he can explain more points.

श्री गंगा शरण सिंह: दो तीन बातें कही गई आलोचना के सिलसिले में। एक मित्र ने कहा—मैं नाम नहीं लेना चाहता कि यह रिपोर्ट देशद्रोहिता का प्रमाण है। मैं स्वभावतः ऐसे कड़े शब्दों के प्रयोग का आदी नहीं हूं और उसका जवाब उसी तरह से देने का भी अभ्यस्त नहीं हूं। मेरे मित्र डाह्याभाई पटेल हैं, श्रीमती यशोदा रेड्डी हैं, भाषा के सम्बन्ध में हमारी उनकी राय नहीं मिलती है लेकिन मैं मानता हूं कि डाह्याभाई पटेल भी उतने ही देशभक्त हैं जितना मैं हूं। भाषा के सम्बन्ध में अगर किसी से मेरी राय नहीं मिलती र, इसका मतलब यह नहीं होता कि वह देशद्रोही हो गया है। इसलिये आज यह कहना कि यह रिपोर्ट देशद्रोहिता की है, मैं समझता हूं यह कहना न शब्द के साथ न्याय है, न विषय के साथ न्याय है, न रिपोर्ट के साथ न्याय है, न जिसके लिये कहा गया उस के साथ न्याय है और न कहने वाले का अपने प्रति न्याय है। विचारों के मतभेद को आप देशद्रोहिता में परिणत कर दें, उसका फिर कहीं अन्त नहीं होता है। मुझे तो इसलिये भी और दलीलों के अलावा एक दलील रिपोर्ट की राय के पक्ष में लगती है कि हम सही रास्ते पर हैं—एक ओर ऊपर आक्रमण किया जाता है कि हम अंग्रेजी लादना चाहते हैं दूसरी ओर आक्रमण किया जाता है कि कि हम हिन्दी के फेनेटिक हैं— तो बगैर दलील के भी मुझे खुद महसूस होने लगता है जैसे मैं सही रास्ते पर हूं और मैं समझता हूं इस उम्र में इन दिनों तक काम करने के बाद, आज मुझे अपने सम्बन्ध में यह सार्टीफिकेट देने की जरूरत नहीं है कि राष्ट्रभाषा हिन्दी का मैं हिमायती हूं या नहीं हूं। मैं उसे अपने लिये शर्म की बात समझता हूं।

दूसरी बात यह कही गई कि हम लोगों ने शिक्षा को पीछे धकेल दिया है, यानी जैसा कांस्टीट्यूशन में था उससे भी ज्यादा पीछे रहना चाहते हैं। इस पर जरा गौर किया जाय तो ऐसा नहीं लगेगा। हमने कहा है प्राइमरी स्कूल के स्टेज को दो भागों में विभक्त कीजिये। इसके बारे में कहा गया कि हम तो संविधान में जितना कहा गया था

कि चौदह वर्ष तक की उमर के बच्चों को मुफ्त शिक्षा मिलेगी दस वर्ष के भीतर उससे पीछे चले गये। मैं कहता हूं कि ऐसी बात नहीं है। हम जो आज कह रहे हैं वही बात पहले नहीं की गई, उसी वजह से संविधान में दस वर्ष के भीतर मुफ्त और अनिवार्य शिक्षा की पहली बात अभी तक पूरी नहीं हुई। संविधान में कहा गया है कि पन्द्रह वर्ष में हिन्दी राष्ट्र भाषा हो जायेगी, संविधान में कहा गया कि दस वर्ष के भीतर चौदह वर्ष की उम्र वालों को फ्री शिक्षा मिल जायेगी। संविधान में कहा गया प्रोहिबिशन के बारे में, नशाबन्दी के बारे में। लेकिन तीनों के बारे में संविधान में कहने के बाद भी कोई स्टेज, कोई कार्यक्रम तय नहीं किया गया था उसी का परिणाम है कि तीनों स्टेज खटाई में पड़ी हैं। अगर उन सब बातों के बारे में, भाषा के बारे में, एजूकेशन के बारे में, नई नशाबन्दी के बारे में इसी प्रकार अमल किया गया होता तो मेरा ख्याल है हम लक्ष्य पर पहुंच गये होते। आज परिस्थिति क्या है? आज परिस्थिति यह है कि बीस वर्ष की आजादी के बाद हमारे यहां 78 प्रतिशत लोग हैं जो प्राइमरी स्कूलों में जाते हैं, अभी 22 प्रतिशत प्राइमरी एजुकेशन भी नहीं पाते और यह सारे देश का औसत है। अगर आप प्रांतों का औसत लीजिये तो ऐसे प्रान्त भी हैं जहां कुल 56 प्रतिशत लोग अभी प्राइमरी एजुकेशन पाये हुये हैं। अगर जिला स्तर पर जाइये तो ऐसे जिले भी हैं जहां सिर्फ 21 प्रतिशत लोगों ने प्राइमरी की शिक्षा पाई है। प्राइमरी स्तर तक शिक्षा देने के लिये मैं समझता हूं यह सही तरीका है कि आप अपने कार्यक्रम को दो हिस्सों में बांट कर तय करें तो संविधान में जो लिखा है वह पूरा हो सकता है। अगर आपने स्टेज तय करके कार्यक्रम नहीं चलाया तो मुझे शंका है कि, दस वर्ष तो गुजर गये, और दस वर्ष और गुजर जायेंगे लेकिन एडल्ट एजुकेशन का सवाल हल नहीं होगा। इसलिये स्टेज की जो बात कही गई है वह मामले की जो उलझा हुआ है, उसको सुलझाने की दृष्टि से किया गया है, वह संविधान को पीछे नहीं लाने वाला है, बल्कि संविधान में जो कुछ कहा है उसकी पूर्ति के लिये एक क़दम है। *(Time bell rings)* एक मिनट और। जहां तक मतभेद का प्रश्न है, मैंने आप से शुरू में निवेदन किया कि चार मुख्य विषय हैं जिन पर मतभेद हैं हमारे सदस्यों में। एक तो है नेबरहुड स्कूलों के बारे में, दूसरा है क्षेत्रीय भाषाओं को माध्यम बनाने के बारे में।

मुझको अफसोस है कि हमारे मित्र डाह्याभाई पटेल और उनकी पार्टी के ही दूसरे सदस्य अमीन साहब इस विषय में हम से सहमत नहीं हो सके और बरों साहब भी सहमत नहीं हो सके। ये तीन मित्र हमारे हैं जो क्षेत्रीय भाषाओं के शिक्षा का माध्यम होने में सहमत नहीं हो सके। वैशम्पायन जी ने अपनी टिप्पणी में कहा कि क्षेत्रीय भाषायें रहें लेकिन उनके साथ साथ अंग्रेजी भी रहे इसलिये मैं उनकी असहमति को उस हद तक नहीं मानता। लेकिन तीन भाइयों की असहमति से मुझे दुख है। लेकिन आपको यह सुनकर आश्चर्य और प्रसन्नता होगी कि बाकी तीस मेम्बरों में से 26 मेम्बरों ने जो भिन्न भिन्न पार्टियों के थे, डी० एम० के० थे, संयुक्त सोशलिस्ट पार्टी के थे, पी० एस० पी० के थे, जनसंघ के, कम्युनिस्ट पार्टी के थे, कांग्रेस के थे और हमारे जैसे निर्दलीय भी थे, उन 26 मेम्बरों की राय उसके बारे में एक हुई है, केवल चार मेम्बर अलग रहे।

दूसरी बात आई है नेबरहुड या समान स्कूल के बारे में। चार सदस्य ऐसे हैं जिन्होंने उससे असहमति प्रकट की है।

जहां तक प्रश्न था कि शिक्षकों को राजनीति में हिस्सा लेना चाहिये या नहीं लेना चाहिये इसके बारे में दो सदस्यों का मतभेद। हमने सिफारिश की है कि

[श्री गंगा शरण सिंह]

अगर शिक्षक राजनीति में हिस्सा लेना चाहें तो आवश्यक रूप से कम्पलसरीली उनको छुट्टी ले लेनी चाहिये उस संस्था से जहां वह पढ़ाते हों रिपोर्ट में यह सब है, मैं ज्यादा समय नहीं लेना चाहता, मैंने सिर्फ संक्षेप में उसका जिक्र कर दिया। शिक्षा का विषय ऐसा है कि जिसके संबंध में आप पाइयेगा कि आज सर्वसम्मति नहीं हो सकती, किन्तु सर्वसम्मति नहीं होते हुये भी इतने अधिक दलों के लोगों का एकराय होकर सिफारिश करना एक नई घटना है

श्री तारकेश्वर पांडे (उत्तर प्रदेश) : किसके संबंध में ?

श्री गंगा शरण सिंह : शिक्षा का माध्यम और समान स्कूलों के विषय में लेंगुएज त्रिभाषा सूत्र का प्रश्न उठता है। थ्री लेंगुएज फारमूला अगर सफल हुआ होता तो मुझे बड़ी प्रसन्नता होती। मैं भी उन लोगों में था शायद आपको पता हो कि नेशनल इन्टीग्रेशन कान्फ्रेंस में और नेशनल इन्टीगेशन काउन्सिल में जब थ्री लेंगुएज फारमूला स्वीकार हुआ था तो मैं काउन्सिल और कान्फ्रेंस दोनों का सदस्य था। थ्री लेंगुएज फारमूले के बारे में मैं अधिक नहीं कहता चाहता। इतना ही बतला देना चाहता हूं कि जो भी कारण हो, कारण में मैं नहीं जाना चाहता परिस्थिति चाहे जो हो शायद ही किसी राज्य में उस फारमूले का पालन किया गया हो। मैं नाम नहीं लेना चाहता। मुझ को थोड़ी जानकारी है प्रत्येक प्रान्त के बारे में। सबसे बड़ी बात यह है कि भारत सरकार ने यह तय किया कि अहिंदी भाषी प्रान्तों में हिन्दी के जो शिक्षक रखे जायेंगे उनका सारा खर्चा भारत सरकार देगी ; 45 लाख रु0 साल हिन्दी के शिक्षकों के लिए देती है। *(Interruptions* मैं दोनों पर आ रहा हूं। जहां तक हिन्दी के शिक्षकों का प्रश्न है, शिक्षक रखे गये हैं, लेकिन एक प्रान्त के बारे में मैं जानता हूं कि हिन्दी की पढ़ाई तो हो सकती है लेकिन हिन्दी में परीक्षा देना अनिवार्य नहीं जरूरी नहीं। अब कौन पढ़ेगा आजकल के जमाने में अगर उससे कहा जाय इम्तिहान देना जरूरी नहीं है ? एक प्रांत है जहां इम्तिहान दे सकते हैं लेकिन दूसरे सबजेक्ट्स में पास करने के लिये जहां 35 प्रतिशत मार्क चाहियें वहां हिन्दी के लिये 15 प्रतिशत चाहियें और आवश्यकता होने पर उसमें 10 मार्क्स ग्रेस का मिल सकता है। एक सूबा है, जहां हिन्दी में परीक्षा देनी जरूरी है, पढ़ना जरूरी है, लेकिन उस परीक्षा के मार्क्स सारे टोटल में नहीं जोड़े जायेंगे, उसकी बिना पर श्रेणी नहीं मिलेगी और उससे कोई लाभ नहीं होगा। इस प्रकार अन्य भिन्न भिन्न प्रान्तों का हाल है और चूंकि इस कार्य से मेरा संबंध रहा है। इसलिये हर सूबे की बात तफसील में बता सकता हूं, लेकिन उसके लिये समय लेना नहीं चाहता। एक सूबे में तो क्षेत्रीय भाषा और अंग्रेजी के अलावा क्षेत्रीय भाषा के विशेष अध्ययन को तीसरी भाषा का स्थान या रूप दिया गया है।

दूसरी ओर हिन्दी भाषी प्रान्तों में क्या हुआ है ? जो थ्री लेंगुएज फारमूला है वह हिन्दी भाषी प्रान्तों में भी लागू नहीं हुआ है इस लिये हमने रिपोर्ट में भाषा के चुनाव के संबंध में पूरी छूट देने की कोशिश की है। आज सवाल उठाया जाता है कि उत्तर प्रदेश या बिहार का आदमी अगर बंगला सीखे, उड़िया सीखे, पंजाबी सीखे तो शायद उसकी उपयोगिता होगी, अगर कोई तामिल मैसूर की भाषा सीखता है तो उसका क्या उपयोग होता है ? इसलिये अगर भाषा सीखने की कोई यटिलिटी है, आवश्यकता है, तो इस दृष्टि से भाषा के मामले में हमने छूट देने की कोशिश की है और जिस तरह सब के ऊपर बराबर बोझ पड़े उसका ख्याल रखा है। 3 P. M. अगर इससे भी कोई बढ़िया स्कीम निकले तो मुझे कोई उजर नहीं होगा और मैं समझता हूं कि एजूकेशन मिनिस्टर या किसी और को

कोई उजर नहीं होगा । यह तो कार्यक्रम का प्रश्न है । कार्यक्रम के बारे में एक चीज थी जो कि कारगर नहीं हुई, जो चलाई नहीं जा सकी और दूसरी चीज आपके सामने रखी जाती है । अगर इससे भी कोई अच्छी चीज निकल सके, यह सदन निकाल सके, देश निकाल सके, कोई भी निकाल सके, तो मैं यह कह सकता हूं कि हमारी कमेटी के जो मेम्बर हैं उन्हें बहुत खुशी होगी और मुझे ऐसा लगता है कि शिक्षा मंत्री और शिक्षा मंत्रालय को भी इससे खुशी होगी अगर इससे कोई बढ़िया चीज निकल सके । लेकिन हमने यह रिपोर्ट शून्य में नहीं लिखी है । हमारे पीछे कुछ इतिहास था, हमारे पीछे कुछ धारणायें थीं, कुछ अनुभव थे और हमारे पीछे कुछ पहले की हुई चीजें थी और उनके आधार पर उनसे लाभ उठा कर बर्तमान परिस्थिति में हमने यह रिपोर्ट लिखी । जहां तक उद्देश्य का सवाल है, जहां तक नीति का सवाल है, इसमें मुझे खुशी है कि हमारे कमेटी के सदस्यों ने एक राय जाहिर की और यहां पर भी उसके बारे में विरोध में नहीं कहा गया है । पद्धति में थोड़ा सा मतभेद है । लेकिन जो मुख्य मतभेद है वह कार्यक्रम के बारे में हुआ है । तो इस संबंध में मैं यह कहना चाहता हूं कि अगर इससे कोई अच्छा सुझाव आने को तैयार हो कार्यक्रम के बारे में, तो इस बारे में किसी का दिमाग बंद नहीं है और उसको लेने के लिए हम सभी तैयार हैं । लेकिन अभी जो परिस्थिति है उससे इससे अच्छा हम लोगों को अपनी विद्या और बुद्धि के मुताबिक नहीं लगा । इसमें देश द्रोह का प्रश्न नहीं है, किसी को ठगने का प्रश्न नहीं है किसी को धोखा देने का प्रश्न नहीं है । इतना ही है कि हमने आपके सामने एक स्कीम रखी है, इस स्कीम पर काम करेंगे, आगे विचार करेंगे और उसकी रोशनी में आगे सारी चीजें करेंगे । यह सुझाव अंतिम नहीं है ।

मैं आप से निवेदन करना चाहता हूं कि अपना अपना कहने का अलग अलग ढंग है । किसी चीज को कोई किसी ढंग से कहता है और किसी चीज को कोई किसी ढंग से कहता है । हमारे सदन के कुछ मित्र यहां और बाहर जिस चीज को जिस ढंग से कहते हैं, उस ढंग से शायद मैं न कह सकूं । यह मेरी लाचारी है कहने के ढंग में । मां, मां भी है और पिता की पत्नी भी है । लेकिन मां को "मां" कहना और बाप की औरत कहने में बहुत बड़ा फर्क है । यह तो अपने अपने कहने का तरीका है कि "मां" को मां कहिये या बाप की औरत कहिये । जिस को जैसी ख्वाहिश होती है जैसी आदत होती है, जैसी रुचि होती है, उसी हिसाब से वह कहता है मेरी यह लाचारी है कि मैं उस सतह पर नहीं उतर सकता और इसलिए इसके बारे में विशेष नहीं कहना चाहता ।

श्री अकबर अली खान : उर्दू के बारे में बतलाइये ।

श्री गंगा शरण सिंह : हमने जितनी भारतीय भाषायें हैं उनके बारे में कहा है और उर्दू भी उनमें एक है । यह जो 25 पेज की रिपोर्ट है उसमें हमने छः जगहों पर माइनारिटीज की भाषा के बारे में उल्लेख किया है ।

श्री अकबर अली खान : उर्दू का कोई रोजन नहीं है ।

श्री गंगा शरण सिंह : इसीलिए मैं कह रहा हूं कि उर्दू के बारे में कोई राजन का सवाल ही नहीं उठता है । जितनी हमारी भारतीय भाषाएं हैं शिड्यूल में उन सब के साथ हमने समानता का बर्ताव किया है । केन्द्र आज हिन्दी-अंग्रेजी के रूप में द्विभाषी है । इसलिये हिन्दी-अंग्रेजी का अलग जिक्र है । जिन भाषाओं के राज्य भाषा होने के बारे में कांस्टीट्यूशन में लिखा गया है हमने उनका विशेष उल्लेख किया है । लेकिन हमने जहां प्रत्येक भारतीय भाषा के बारे में उल्लेख किया है वहां उर्दू को भी शामिल किया है । इसके अलावा कम से कम 25 पेज की रिपोर्ट में हमने छः जगहों पर माइनारिटीज की भाषा, उनके विशेष हितों की चर्चा की है ।

[श्री गंगा शरण सिंह]

सिर्फ उर्दू के बारे में अगर आप कहें तो फिर हमारे सामने सिंधी, एंग्लो इंडियन्स भी हैं और उन की भाषा को भी उसी स्तर पर समझना चाहिये । इसलिए इस संदर्भ में आप देखेंगे तो पायेंगे कि माइनारिटीज की जबानों के संबंध में कम से कम छः जगहों पर उल्लेख जरूर किया है और इसमें उर्दू भी शामिल है । अगर हम उर्दू के बारे में अलग कहते तो हमारे एंग्लो इंडियन भाई भी हैं, दूसरे भाई हैं, दूसरे माइनारिटीज की जबानें हैं, उनकी तरफ भी देखना चाहिये । इसके अलावा उर्दू के संबंध में हमारे और आपके जो विचार हैं, वह दूसरी चीज है । लेकिन यहां पर हम शिक्षा के संबंध में जिस स्तर पर विचार कर रहे हैं उसमें भारतीय भाषायें समकक्ष रहेंगी । इसमें उनके लिए ज्यादा ही गुंजाइश रखी है कम नहीं रखी है ।

उपसभाध्यक्ष महोदय, आपने मुझे इतना समय दिया, इसके लिए मैं आपको धन्यवाद देना चाहता हूं ।

SHRIMATI SHYAM KUMARI KHAN (Uttar Pradesh): Mr. Vice-Chairman, after this hrilliant exposition of the Education Committee report by my predecessor I am feeling a bit nervous of standing and giving my views. A very brilliant report by the Education Commission has been added to the galaxy of reports on education since the attainment of freedom. The report of the Committee of Members of Parliament on Education is a very useful one so far as we are concerned and I am, in the short time at my disposal, going to confine myself to this report. It is for the first time perhaps in India that a national policy on education has been given to us. We have been told that education is a powerful instrument for national development— social, economic and cultural. So far, education was almost a powerful instrument of the Development of the personality of the child, of the human being and then that human being because an asset of socity, There-for I wlecome this in a way becausf-at the moment, after 20 years 01 freedom I am one of those who feel that we have not invested properly in the human beings in the last 20 years; otherwise, we would not have seen all those things we are seeing today which had better be left unsaid.

So far as neighbourhood schools ore concerned, these have caused a great deal of controversy among the speeches that have been delivered in this House. I am one of those wiiu, twenty years ago, believed in the principle of neighbourhood schools and sent my child to an ordinary municipal school. I confess the results were disastrous and when I placed the whole case before my own professor of the Allahabad University who was a very distinguished educationist, he advised me that I must withdraw the boy from the school but he quietly told me one thing. He said: "Will you kindly enquire what the salary is of the master to whom you have given this child of seven?' When I enquired about the salary, I got my answer. That master was drawing less than the salary of a Chaprasi in a Government office. That master to whom the people o* the town were supposed to give their children for education, for the moulding of the child's mind was a man who was paid less than perhaps even a labourer. Therefore, in my opinion, the hub of the problem is the teacher. The Education Committee report may be excellent. The suggestions may be very good and the theme may be perfect but unless you have the teacher and a proper type of teacher, at that, you cannot bring success to any educational system in India. For that I would beg to submit that I have always felt that not only in regard to the teacher but in other departments also there is no justification to have any difference in the pay and emoluments as well as status of two sets of Government servants whether they are teachers, or I.F.S. and I.A.S. officers or of any other services. All Government servants, of one service sta-

tus should have the same emoluments and same status. I am sorry that j the Committee on Education has merely recommended an improvement in the status of the teachers. My own submission i_s there must be a revolution in the status of the teacher if we ar_e going to do anything in education.

So far as neighbourhood schools are concerned, I told you what I did personally and in spite of my own experience 20 years ago, I am all for neighbourhood schools. My only submission to the Committee is that where they have recommended the neighbourhood schools, they have used the words:

> "The primary schools should be made the common schools of the nation by making it obligatory on all children irrespective of caste, creed, community, religion, economic condition or social status, to attend the primary schools in their neighbourhood".

I object to the word 'obligatory'. Within the next 5 years it is not possible for u_s to bring up our primary schools to the efficient status required. There may be children who can get the benefit of their birth because their parents are born in better circumstances. There may be children who may be able to afford a better school that is not a neighbourhood school. Why must you deprive those children of that school? Therefore my submission is that whereas the neighbourhood school, as my friend Shri Ganga Sharan Sinha said, must be the school for 90 or 99 per cent, of the people, if the word 'obligatory* remains even the 1 per cent or 1 per cent, who can go to other schools will not be permitted to go there. There must be no regimentation in education. Even in places like Great Britain where education is free, they have got what they call 'Independent Schools'—they do not call them Public Schools but they call them Independent Schools and though these Independent School3 receive no grant whatsoever from public funds but they are open to inspection and they must register with the Department of Education and Science. As soon as they register with th_e Department of Education and Science, the Government gets power of control over the school. So instead of making it obligatory for a child to attend a neighbourhood school, why cannot you make it obligatory for the so-called Public School in India to open half their seats for children of lesser status and for children who cannot afford it.

SHRI AKBAR ALI KHAN; They have done it for a certain percentage. Yes, but that is on a semi-paying basis. Those who do send their children to these public schools belong to a very much higher status than the usual run of Indians. Nobody getting Rs. 500 a month can afford to pay even Rs. 100 for keeping his child in a public school. Even with a scholarship that is what he has to spend. Otherwise a public school costs Rs. 375 per month which no average Indian can be expected to afford. So my submission is that during this transition period, till we can bring up our neighbourhood schools to the standard we ^{al}l desire, w_e should continue with all other types of schools even encouraging voluntary agencies to run them. After all, we have been appealing to non-official and voluntary agencies to start nursery schools. Therefore private schools must not be completely eliminated from the scheme of things.

Then again the question of language has been raised a great deal and the greatest compliment that one can pay to this Commission i_s that the Hindi-loving people feel that Hindi has been finished and the people who believe in English feel that English has been completely eliminated. I submit that n_O language that exists can be finished. As a student of literature and as one who loves literature I can say that no language can also b_e imposed on any country or any people. A language belongs t_0 the people. Th_e cloister and cell with

[Shri Akbar Ali Khanj their research scholars can develop a language, but only that language remains that really belongs to the people. I know English has helped us to get educated in the past. I have Been educated in English and therefore 1 am speaking in English. But English cannot be our national language. It has to be replaced by another language in ten or fifteen years. Actually w© need not fix any time limit, but this has to come. I believe also in the voluntary aspect for people to learn the link language. Nevertheless, we must have a national language and there is no doubt that every country must have a language of its own. There is also no doubt that every child has a right to be educated in its own mother-tongue. We cannot deny these two rights to the people. It is impossible for the child to learn properly if the child is not educated in its mother-tongue. It is impossible for India to exist if we do not have a link language and it is impossible for India to be a world figure if we eliminate English completely. These are the things which we haVe to accept and within the framework of these three things we have to evolve and draw up our scheme. This He-port does not give a detailed scheme. That scheme, I expect, will be worked out in detail by consultations with various States, after consultations with various educationists and after taking into account what the official language will be. Therefore, I d° not want to say anything more on the question of language, except that the Kegional language, the link language 'and English also must continue.

Mr. Vice-Chairman, social Integra- ' lion has been spoken of and we bnve . derived a great deal of satisfaction from the fact that it has been accepted that pre-school training, and nursery schools will be run as they are today, by non-official and social workers or by voluntary agencies. There is no doubt that unless the pre-school child is locked after, the primary school will not be a success. Education for the child must begin much before he goes to the primary school. Here I would appeal to the Education Department to give every facility to those voluntary agencies that are prepared to take the responsibility of running schools. It has been a very long period of service that these voluntary agencies have been doing in the field of education in our country. Education is the subject which voluntary agencies and social workers have always worked for. Therefore I appeal and assert that the Government must think of them now. I may also go further and say that at this moment unless the Government helps them to do this work in the field of giving training to the children, unless Government helps them to ccme forward and take up this pre-school education or even primary schools in various places, this scheme will not be a success. They should be helped, as there will be a shortage of teachers, there will also be a shortage of trained teachers. Training cannot be given overnight. There will have to be a period of training. Therefore I have a suggestion to make. There is a very large number of educated women in this country who are doing nothing. We must appeal to them, appeal to their better sense to take to some teaching work. I would even go a step further and say that we may even conscript the educated woman, the graduate woman who is sitting at home, and ask her to come and help in the preschool training of the child or even work in the neighbourhood school. I can assure you that if there is a regular agency to do the needful these women will come. I am in touch with them In another capacity and they have expressed their desire to serve, but they just do not know how and where to go. It is for the Education Minister to give opportunities to such people to serve.

Another suggestion is that we always have some brilliant students in our colleges. You have said that

social welfare will also be encouraged. So these brilliant students can be persuaded to give one hour a day or five hours a week for teaching smaller classes. This need not necessarily be in the schools. I know a time in Allahabad when a student of the M.A. Final glass was actually taking classes of the MA. Previous students. If this type of service is developed it will be helpful. I am only throwing out- suggestions to make this Report a great success. I do feel, Mr. Vice-Chairman, that this Report will do yeoman service in the cause of education. Though I feei that in education there cannot be any limits, that in matters connected with the mind there must be no limits and knowledge should have no boundaries or restrictions, I do feel that this Report, if fully implemented, will go very far in advancing the educational progress of our country.

SHRIMATI C. AMMANNA RAJA (Andhra Pradesh): Mr. Vice-Chair-man, Sir, I must really compliment the hon. Minister of Education for having taken up this matter seriously and tried to lay down a national policy for the country in the matter of education. The Parliamentary Committee and the main Commission, I mean the Kothari Commission, have taken great pains to go into the matter in detail and to evolve a scheme. It may not be altogether satisfactory, but it is some basis on which to proceed.

The main thing which we have to refer to and which this Report has dealt with at length is the language policy of the country. There have been many committees and commis-sions as the previous speaker Shrimati Shyam Kumari Khan has said. There was the Radhakrishnan Committee on education, there was tft* Mudaiiar Commission. But I must really admit that I do not know whether every time there has been a report we have been progressing or taking a retrograde step. There was the scheme for Higher Secondary and them the Pre-Univer-sity course. There were the multi-purpose schools and even before that we remember we had the basic education. 1 do not know how many are satisfied with these experiments. We are really experimenting with the cruldien of the day. As for basic education, I do not know how *many* here feel that it has been a success. I know to my cost that these multipurpose schools have bungled. The students coming out of these multi-purpose schools, particularly those giving training in engineering and otner such subjects, were lit neither for higher education nor for technical courses. Now even the Kothari Commission has recommended the three language formula Which to a very great extent was acceptable to almost ail the States of the country. Now I do not know why this Committee has made it,a two language formula. Shri Ganga Sharan Sinha was hesitant about mentioning the States which did not follow the three language formula. Most of us have attempted to work it and it was to a very great extent a success and to the satisfaction of most of us. That is, we had our own mother tongue or regional language, Hindi and English. The only State which did not like Hindi was Madras and they did not implement the national policy. That was the only State and because of them the whole thing had to be reopened to the deteriment of the whole lot of us. So I feel that we must revert to the three language formula. Hindi, of course, has to be recognised as the national language. Though it has not been so far, it must be our national language and English has to find a place in our education. We have received our education in Jinglish and we know that it is not only an international link but our national link also is the English language. As a sincere Congress worker I have always liked to learn Hindi. I can read it but I cannot speak fluently. It is not that we are against Hindi language; we like it but we have to learn it gradually. But as far as I know I feel very doubtful if Hindi can ever replace English and so I feel

[Shrimati C. Ammanna Raja] that English must be the language for university education.

SHRIMATI DEVAKI GOPIDAS (Kerala): It is" easier for children to study.

SHRIMATI C. AMMANNA RAJA: Whatever is easy for the children to study, we have to accept and that is why we recommend that. Even u» the Kothari Commission Report they have suggested that English must be taught even from the beginning. Not only that; I feel that we must recognise English as one of the national languages just like the other fourteen languages. There are so many Anglo-Indians who are living in the country today and whose mother tongue is English. There are so many people in the West Coast, for instance in Goa, Mangalore and other places, who speak Konkani at home—it is not a written language—but whose language is actually English. Now that we are free we need not be afraid of adopting English as one of our national languages.

AN HON. MEMBER: Hear, Hear.

SHRIMATI C. AMMANNA RAJA: Yes, Mr. Pande will question. <

SHRI TARKESHWAR PANDE; I never question. Why should I question you?

SHRIMATI C. AMMANNA RAJA: I am sorry. So we must not feel shy of anything. We must not stand on prestige. We must see how best we can take the country forward and this is how i feel we really can take the country forward. So many people have said yesterday that we do not have proper literature in many of these languages and particularly in Hindi for these languages to become the medium of instruction at the university level. If we did that we will be bungling further. And here I want to suggest one thing. How much time do we give for discussing this important subject? Just two or three days are mentioned. Is that sufficient for discussing a Report which is going to have far-reaching consequences? There wil be so many people protesting here who will not get a chance to give their views. Why should we not give a little more time to discuss this Report which, as I said, is going to have far-reaching consequences? This problem cannot be easily solved like that. We must hear everybody's views and lay down a national policy.

Now, neighbouring schools are good. As Shrimati Shyam Kumari Khan said, even in the Consultative Committee I have been saying that they have not come up to the standard so that we can send our children there. How many of them have got buildings? I have been touring the villages and on most of the rainy days the class rooms become wet and nobody can say when the roof will come down. How many of them have got libraries? How many of them have got laboratories? Instead of improving them first, we should not take any step which wil take us only backward.

SHRIMATI YASHODA REDDY (Andhra Pradesh): How many Ministers have their children in Indian schools, let alone the neighbouring schools?

SHRIMATI C. AMMANNA RAJA: Why should we think of the Ministers? Today somebody is a Minister; tomorrow he is not. I do not care what they do. In the olden days Krishan and Kuchela, both of them, were attending the same school. There was no difference then. It is not because of class difference or anything like that that I say this. The point is, the schools must be up- to the standard for everybody to go there. Why should we have any prejudice against Public Schools? Shrimati Shyam Kumari Khan said that half the children must be from the poorer sections. It is not a question of the poor or the rich. The Government must maintain the schools and the Government must subsidise them.

They must give scholarships to such of those who have merit and who pass with brilliant marks so that we can have at least one set oi people who are really getting good training. Public Schools I cannot afford but the children are sent to the Public Schools for the very good training that is given there. They are taught horse riding; proper manners are taught to the children. There are so many other things taught there which are not taught in the other schools. So we must have better schools. We should have no prejudice and we must have certain schools where at least a few people can get real good education, good manners and good training. As for minorities, minorities must be protected everywhere. It is all right for the Government to lay down policies, but how much of them is.implemented I want to know. Today we hear that in Orissa Telugu papers are boycotted, Telugu pictures are boycotted, Telugu people are ill-treated. Is this the way we are going to have national integration?

SHRI N. PATRA (Orissa): There is not a single Oriya M.L.A. in Andhra whereas one Andhra gentleman from Orissa is a Minister of State at the Centre.

SHRIMATI C. AMMANNA RAJA: Please do not start such things. By your speech don't encourage your people to . . .

SHRI N. PATRA: A Telugu person is a Minister of Cabinet rank in Orissa and another a Minister of State at the Centre while there is not even one Oriya District Magistrate in Andhra.

SHRIMATI C. AMMANNA RAJA: One mistake does not justify another. Whoever commits a mistake, it is a mistake and it must be remedied. Whtever it may be,- by your speech you should not encourage these elements who are taking resort to these wrong ways. You must vmake a statement today that such things should not happen. We must live amicably and we must be friendly with each other.

SHRI B. C. PATTANAYAK (Orissa): Without referring to the matter of the newspaper how do you condemn the agitation? You should make a statement also.

SHRIMATI C. AMMANNA RAJA: Just because I have said something, you are saying something.

SHRI B. C. PATTANAYAK: You should not raise such things here.

(Time *bell rings)*

SHRIMATI C. AMMANNA RAJA: I have not finished. Please ask the Minister to give some more time to all of us.

THE VICE-CHAIRMAN (SHRI RAM NIWAS MIRDHA): You should not listen to the interruptions.

SHRIMATI C. AMMANNA RAJA: How can I not? By their statement they are encouraging rowdy elements. *(Interruptions)* Please do not ad'd to the trouble.

Now one word about the members of the Committee of Parliament. There are only three South Indians. This is really a thing which has to be supported by the South more than anybody else. They are Mr. Chengal-varoyan and Mr. Anbazhagan from Madras and Mr. M. R. Krishna from Andhra. For all the four States of the South, Kerala, Madras, Andhra and Mysore, only three people have been selected. It is not for membership that I am fighting. But it is important that they should know our views.

THE MINISTER OF EDUCATION (DR. TRIGUNA SEN): The members were not selected by the Minister but by the different political parties. I am sorry that in spite of English being the medium of education, the hon. lady Member is having these regional feelings.

SHRIMATI C. AMMANNA RAJA: I have not quite followed him.

SHRIMATI YASHODA REDDY: The Minister is encouraging regional feelings more than anybody else.

SHRIMATI C. AMMANNA RAJYA: It is not our regional ^feeling. Our view is that we want English, Hindi and the Southern languages. I think there must be more representation for us that we may give some concrete suggestions. Mr. M. R. Krishna, who is from Andhra, is actually from Hyderabad, -wfhere the medium is Urdu. So, he cannot and does not really represent us. I have nothing against him, but his views will be different.

One word before you stop me. I have to say something about girls' education. You kindly excuse me for that. It *h* given at page 10 of the Committee's Report:—

> " .. .and in most areas of study, girls have shown remarkable achievements and proved that tKey are at least equal to, if not better than, the boys. But in spite of all that has been done, there is still a wide gap in the enrolment of boys and girls at all stages. It is necessary to eliminate this gap at the primary stage, and to narrow it at the other stages."

So, everybody is convinced and they have been talking about the necessity to give some incentives, some inducements to fill this gap so that they might come on a par with boys. For that, pious resolutions or statements will not do. I have been pleading with the Minister even in the Consultative Committee that a separate amount should be allotted to girls' education. Special scholarships have to be given. Subsidised hostels must be opened and they must be treated better till they come to the level of boys. They must be treated like Scheduled Castes or Scheduled Tribes by the Centre by giving some finds for the encouragement of girls' education. Not all the States • re in a position to give more and more allotment for girls' education and these pious resolutions remain pious and not implemented. Whatever we say must be implemented. Otherwise we cannot have the confidence of the people, confidence of the minorities or the backward people. In order to encourage these people, you have to subsidise them. The Centre must provide funds and subsidised hostels are necessary. We do not have a sufficient number of schools at the higher level, at the secondary school level. Grown-up girls do not like to go to boys' schools. I have been pleading with the Minister that this should be done.

There are so many other things and I hope I will get some other opportunity and some other time.

श्री त्रिलोकी सिंह (उत्तर प्रदेश) : मान्यवर यह ऐसा विषय है जिस पर दो दिन क्या अगर एक हफ्ता भी लग जाता तो काम होता मगर मुझे अफसोस है कि इसके महत्व पर जब समय नियत किया गया तब ध्यान नहीं रखा गया। मेरे हिस्से में तो चन्द मिनट हैं और कुछ कहने के पहले मैं शिक्षा मंत्री को मुबारकबाद देना चाहता हूं।

[THE DEPUTY CHAIRMAN in the Chair]

कि उन्होंने यह साहस किया कि शिक्षा के सम्बन्ध में सरकार की क्या नीति होनी चाहिए, उस ओर विचार करें और किसी निर्णय के पहले पार्लियामेंट के सदस्यों की भी राय और मशविरा ले लें।

कमेटी की जो रिपोर्ट हमारे सामने प्रस्तुत है उसमें बहुत सी अच्छी बातें कही गई हैं। मुझे उम्मीद है कि जब सरकार अपनी नीति तय करेगी तब उनमें उन बातों का ध्यान रखेगी।

मैं एक बात की ओर उपसभापति महोदया आपका ध्यान विशेष तौर पर दिलाना चाहता हूं कि हिन्दुस्तान की बदकिस्मती रही है कि सब काम 31 मार्च

को पूरा होना चाहिये । मुझे शुबहा है कि पांच साल की मियाद जितनी हमारी कोशिश शिक्षा को सुधारने में होगी उसे बंटाधार कर देगी । मेरा वास्ता कुछ शिक्षा संस्थाओं से है और मैं नहीं समझता हूं कि इतने बड़े मुल्क में पांच साल के अन्दर हम कामयाबी के साथ युनिवर्सिटी में या हायर सेकेंडरी में सारी शिक्षा अपनी रीजनल भाषा में दे सकेंगे । सवाल केवल ट्रांसलेटर्स का नहीं है । यह दुर्भाग्य है । मैं हिन्दी भाषा भाषियों की सेवा में निवेदन करना चाहता हूं कि आज हिन्दी के बढ़ाने के मामले में—उसे अगर हिन्दी वाले मानें तो सब से बड़ी कमी, रुकावट है अनुवादकों का, ट्रांसलेटर्स की । वे ऐसे शब्द गढ़ते हैं जो कि खुद उन्हीं को तीन दिन के बाद याद नहीं रहते । वे खुद बता नहीं पाते कि इसके माने क्या हैं । उपसभापति महोदया, जबान होती है अवाम की जबान, को हमेशा बनाया है बेपढ़ों ने और सजाया है पढ़े लिखों ने । लेकिन हिन्दी का दुर्भाग्य यह है कि आज इस जबान को बनाने के लिये पढ़े लिखे आदमी नये-नये शब्द गढ़ते हैं जो खुद उनकी समझ में नहीं आते हैं । मेरा उत्तर प्रदेश की विधान सभा का भी यही तजुर्बा है । आज यहां पोर्ट एंड डाक वर्कर्स की जो हिन्दी लिखी हुई थी वह मालूम नहीं क्या थी। मैंने पूछा कि इसके माने क्या है, उन्हीं से पूछा जो कि हिन्दी को जानते हैं, कहा कि मालूम नहीं "पतन" और "गोदी" मालूम नहीं क्या था । उन्होंने फौरन अंग्रेजी देखी और कहा "पोर्ट एंड डाक वर्कर्स"।

यह दुर्भाग्य है कि आज भी शिक्षा के संबंध में विवाद मुख्यत: भाषा पर होता है । यह देश का दुर्भाग्य था जब कि संविधान बनाने वालों ने एक धारा इसकी भी रखी कि मुल्क की भाषा क्या होगी । अगर हम गौर करें और तमाम डेमोक्रेटिक कांस्टीट्यूशंस को देखें तो भाषा के बारे में कहीं कोई विशेष धारा नहीं होती । हिन्दुस्तान में इसका भी इतिहास है । मुसलमान चाहता था कि उर्दू भाषा हो, अधिक आदमी चाहते थे कि हिन्दी भाषा हो, महात्मा गांधी चाहते थे कि हिन्दुस्तानी भाषा हो । नेहरू कमेटी की रिपोर्ट में एक धारा रखी गई :

"The language of the commonwealth shall be Hindustani written in Devanagri or Urdu character."

गुलामी के जमाने में जो सब को साथ लेने के लिये बात रखी गई थी आजाद होने के बाद भी संविधान में वैसी धारा रखी गई । मुझे उम्मीद है, उम्मीद ही नहीं यकीन है कि अगर 15 साल का मियाद न होती तो आज तमिल क्या, तेलगू क्या, मलयालम क्या सब के सब सारा भारत हिन्दीमय हो जाता लेकिन जबरदस्ती किसी जबान को किसी पर लादियेगा तो उसका फर्ज हो जाता है कि उसकी मुखालिफत करे । अकबर अली खां साहब के धर्म में भी यही लिखा हुआ है ।

मैं यह निवेदन करना चाहता हूं कि हिन्दी के झगड़े को हटाइये और मैं विश्वास रखता हूं कि हिन्दुस्तान में अगर कोई भाषा भारतिक भाषा हो सकती है जो कि एक दूसरे को जोड़े, दक्षिण वालों को उत्तर से संबंध कायम रखने में लिखा पढ़ी करने में मदद करे वह यकीनन अंग्रेजी नहीं होगी वह हिन्दी होगी । आखिर दक्षिण भारतीयों ने अंग्रेजी कब से सीखी अंग्रेजों के आने के बाद । और मैं माननीय सदन का ध्यान दिलाता हूं आपके जरिये कि अंग्रेजों का 1757 में राज हुआ और उन्होंने पहले तो जो मदरसा कायम किया वह कलकत्ता मदरसा के नाम से मशहूर है उसमें अरबी और फारसी की शिक्षा दी जाती रही और 15 साल के बाद आगे सन् 1794 में उन्होंने कायम किया संस्कृत कालेज बनारस में जो कि आज भी मौजूद है ।

हिम्मत नहीं पड़ी अंग्रेजी भाषा को लादने के लिये । मैकाले को बहुत लोग बुराई देते

[श्री त्रिलोकी सिंह]

हैं मगर उसने एक भी अंग्रेजी स्कूल की स्थापना भारत में नहीं की । पालिसीज इनिशियेट करनी एक बात थी कि अगर हिन्दुस्तान के लोग हिन्दुस्तान की जनता स्कूल कायम करें तो सरकार मदद करने को तैयार है । उसके पहले सिर्फ कंपनी के कर्मचारियों को अंग्रेजी में शिक्षा दी जाती थी । नतीजा यह हुआ कि पादरी लोग दौड़ पड़े, सारा ग्रान्ट मिशनरी ने ले लिया और उस वक्त की अंग्रेज सरकार ने कहा इसमें बदनामी होगी और लार्ड हैलीफैक्स के दादा सर चार्ल्सवुड ने पालिसी बनाई । 1854 में उसने पहली बार तय किया कि अंग्रेजी के स्कूल सरकार भी स्थापित करेगी ।

सौ साल के बाद उन्होंने ऐसा किया । मगर हम इतने उतावले हो गये कि 15 अगस्त 1947 को आजादी हुई और 26 जनवरी 1950 को हमने चाहा कि बस हिन्दी पढ़ो और जो उसे पढ़े नहीं वह देशद्रोही है । जब तक हिन्दी वाले इस भावना को नहीं निकालते हैं मुझे दुख के साथ कहना पड़ता है हमारी जिन्दगी की कौन कहे हमारे बाल-बच्चों की जिन्दगी में भी हिन्दी का वह दर्जा हिन्दी के लिये वह स्थान जो भारत में होना चाहिये और होना चाहिये था नहीं हो पायेगा । इस लिये मैं बहुत खुश हूं कि कमेटी ने यह सिफारिश की है कि रीजनल लैंगुएज में यूनिवर्सिटी तक शिक्षा हो यह तो अच्छी बात है । मैं उन लोगों से बिलकुल असहमत हूं जिनका ख्याल यह है कि फिजिक्स और कैमिस्ट्री महज अंग्रेजी में पढ़ायी जा सकती है । क्या जापान में फिजिक्स नहीं है, क्या जर्मनी में नहीं है ? किसी बड़े बंगाली भाई ने कहा था कि फिजिक्स के लिये अगर कोई यह कहता है कि बंगला में फिजिक्स नहीं पढ़ायी जा सकती है तो वह बंगला को नहीं जानता है । यह बात आज से 40 साल पहले की है । 40 साल पहले हमारे शिक्षा शास्त्री कहते थे कि इस देश की भाषाओं में उच्च से उच्च शिक्षा दी जा सकती है । लेकिन हमें आज दुख है कि वे अंग्रेजी के साथ ऐसे चिपके हैं और चिपकने में कुछ ऐसा लगा हुआ है कि वे अंग्रेजी छोड़ने के लिये तैयार नहीं हैं । मैं उनसे निवेदन करना चाहूंगा, अंग्रेजी से चिपके रहिये लेकिन नहीं रह सकेंगे अगर यूनिवर्सिटीज में महज इस बात को रख दिया जाय कि तमिल में शिक्षा होगी और अंग्रेजी में भी होगी—दस वर्ष बाद देखेंगे कि अधिकतर तमिल पढ़ेंगे अंग्रेजी नहीं पढ़ेंगे । महात्मा गांधी कहते थे कि जहां कहीं अंग्रेजी में बात करना जरूरी हो तब जवाहरलाल नेहरू को भेज दो मगर देश का राष्ट्रपति, देश का प्रधान मंत्री किसी ऐसे आदमी को बनाओ जो हरिजन हो और अंग्रेजी न जानता हो । वह गांधी जी का लेख था जो किसी से छिपा नहीं है । अंग्रेजी के द्वारा हमारा उद्धार नहीं हो सकता ।

मैं विशेषकर माननीय मंत्री का ध्यान दिलाना चाहता हूं। वह एक पुराने शिक्षा शास्त्री हैं। प्रारम्भिक शिक्षा, बेसिक एजूकेशन के बारे में उन्हें ज्ञान है। क्या वे बता सकेंगे— उत्तर प्रदेश की बात में दावे के साथ कह सकता हूं कि साढ़े 8 लाख की आबादी में एक भी बेसिक स्कूल जिस मानो में गांधी जी ने कल्पना की थी वैसा उत्तर प्रदेश में नहीं है। डा० जाकिर हुसैन ने रिपोर्ट लिखी थी, श्री रामचन्द्रन साहब भी मौजूद हैं, वह भी जानते हैं । सरकार का खर्च होता है महज 23 करोड़ रु०

(Time bell rings)

उपसभापति : आप दो तीन मिनट ले सकते हैं ।

श्री त्रिलोकी सिंह : सरकार का खर्च होता है महज तेईस चौबीस करोड़ रु० उत्तर प्रदेश में । नेबरहुड स्कूल खोलिये या जो चाहे खोलिये । इस आदरणीय सदन के जितने भी माननीय सदस्य हैं उनमें कुछ ऐसे हैं जिनके जरिये अब भी बच्चे हो रहे हैं—क्या वे अपने बच्चे को किसी म्युनिसिपल स्कूल में भेजना पसंद करेंगे ? दो चीजें साथ नहीं चल सकतीं। जितनी लम्बी चादर हो उतना ही पांव फैलाइये ।

रुपया कम है, मंसूबा बड़ा है, डाइरेक्टिव प्रिन्सिपल्स में लिख दिया है दस साल के अन्दर सब बच्चों को मुफ्त शिक्षा दी जायेगी। आज कहते हैं पांच वर्ष के अन्दर काम पूरा हो जायेगा यह नहीं होगा। इस उजलत और नक्शे से महज बदनामी हासिल होगी। मैं निवेदन करना चाहता हूं कि नेबरहुड स्कूल खोले जाने की सरकार की जिम्मेदारी है. यूनिवर्सिटी खोलने की नहीं है। सरकार की जिम्मेदारी, सेकेन्डरी स्कूल की भी उतनी नहीं है। सरकार की जिम्मेदारी प्राइमरी स्कूल खोलने की विशेष रूप से है जिसको उसने कम्पलसरी अनिवार्य बनाया है। जो कम्पलसरी करे जो किती बात को लाजमी करार दे उसका यह फर्ज होता है कि उसको हासिल करने के लिये जितने साधन हैं उनको ठीक से जुटाए। क्या सरकार इस बात के लिये तैयार है कि कम से कम 500 करोड़ रु० सालाना प्राइमरी शिक्षा के लिये अधिक रखें? तो फिर जहां थोड़े बहुत सा न हैं उनसे भी कौम को महरूम करना चाहते हैं। स्कूलों, कालेजों में बैठने की जगह नहीं, खेल कूद की जगह नहीं मगर नए-नए स्कूल धड़ाधड़ खोलते जा रहे हैं। बनारस हिन्दू यूनिवर्सिटी, लखनऊ यूनिवर्सिटी, इलाहाबाद यूनिवर्सिटी——जब ये सेन्ट्रल हिन्दू कालेज, कैनिंग कालेज, म्योर सेन्ट्रल कालेज के नाम से जाते थे तब वहां चार चार प्लेग्राउन्ड थे, तनखा साहब मौजूद हैं उनको मालूम है। आज वहां एक है, तादाद पहले से बीस गुनी ज्यादा है एक्स्ट्रा कैरिकुलर कार्य करने के लिये नाम नहीं है। इनडिसिप्लिन नहीं होगा तो क्या होगा? स्कूल क्या है, तिजारतखाने हैं। कलकत्ता और बम्बई में लोग स्कूल चलाकर उसकी आमदनी पर इनकमटैक्स देते हैं। मैं यह निवेदन करना चाहूंगा गवर्नमेंट जितना रुपया खर्च कर रही है, इन्डस्ट्री पर लगा रही है, कृषि पर लगा रही है लेकिन जैसा माननीया श्याम कुमारी खान ने कहा कुछ इनसान पर भी लगाये अगर कौम को ऊंचा उठाना चाहते हैं, अगर फिरकेवाराना भावना को खत्म करना है और रीजनल फीलिंग हटानी है तब समझाइये बूझाइये और प्र रम्भिक शिक्षा पर ज्यादा जम्मेदारी और ज्यादा जोर लगाइये। फिर देखिये कि कौम ऊंचा उठता है कि नहीं। शिक्षा भी अच्छी होगी और हिन्दुस्तान मालूम नहीं कहां पहुंचेगा। हिन्दी भी फूले फलेगी, साइन्स भी होगी, टेक्नालाजी भी होगी, फिलास्फी भी होगी और दे का बच्चा, देश का आदमी इन्सान बनेगा जिसकी आज शिक्षा में कमी है।

THE DEPUTY CHAIRMAN: Before I call the next Member to speak, I want to put to the House that I have very nearly 24 names yet of those who want to participate. Mr. Mulka Govinda Reddy, I think you suggested that we should have lunch hour. Otherwise we could have accommodated many Members. Now 1 request the House that we sit till 6.30 P.M.

SHRI TRILOKI SINGH: I would suggest that we have one more day for this. The Education Minister is here. Unfortunately the Leader of the House is not here, nor the Whip.

THE DEPUTY CHAIRMAN: Let me finish. I am going to ask the Minister of Education to reply tomorrow, but even so you will have to put in more time today if everyone has to be accommodated. There is no Half an-hour Discussion today; that is for tomorrow, the 10th. If it is the genuine desire of the House that we must accommodate as many Members as possible—I also feel that this is a very very important report on which the views of hon. Members must be expressed, and the maximum the number of Members who can participate the better it would be—I take it that the Members are willing to sit for this extra hour.

SOME HON. MEMBERS: One day more.

SHRI MULKA GOVINDA REDDY (Mysore): This is a very important discussion that we are now having. There are many Members who want to speak and some of the Members belonging to our parties are not given

[Shri Mulka Govinda Reddy]

a chance. So it is necessary that we should have this debate tomorrow. Let the Minister reply tomorrow at 4.30.

SHRI AKBAR ALI KHAN: At 4.

THE DEPUTY CHAIRMAN: I have already said that the Minister will reply tomorrow. But I have in my wisdom not given the time when he will reply, but today we must sit till 6.30. If the House is genuinely desirous of this report being properly discussed, I think the Members should put in another hour and a half so that we can accommodate many more Members.

श्री निरंजन वर्मा (मध्य प्रदेश): मेरा प्रस्ताव है कि इसके लिये एक दिन समय श्रौर बढ़ा दिया जाय।

श्री जगत नारायण (हरियाणा): हां एक दिन श्रौर बढ़ा दिया जाय।

THE DEPUTY CHAIRMAN; I do not know the exact nature of business, the programming. But I have just been told by the Secretary that if the House is desirous of extending it by one day, then the House should be wiling to sit on Saturday.

SOivi^ '.ON. MEMBERS: Yes, yes.

SHRI JAIRAMDAS DAULATRAM (Nominated): I think we might sit on Saturday.

THE DEPUTY CHAIRMAN: If the House is willing to sit on Saturday, then we could have the discussion extended by one more day.

SHRI BANKA BEHARY DAS (Orissa): We are very much interested in this debate and to hear the reply of the hon. Minister. Unfortunately the programming is so pressing that it may be very difficult for us to sit on Saturday.

THE DEPUTY CHAIRMAN: well, tomorrow we will sit through the lunch Hour. But there is a half-an-hour discussion tomor-ow; that could be postponed by an hour. I hope-Members will co-operate in this programme. There are two Money Bills which we shall have to finish, I an told. The Money Bills cannot wait.. I think now and then we shall have to put in a little more work; we should not grudge sitting for one or two or three hours more.

AN HON. MEMBER: On Saturdajr we will sit.

THE DEPUTY CHAIRMAN: Anyway, it is fo_r today and tomorrow.. But the House must sit today for at least an hour or li hours more.

SHRI NIREN GHOSH: An hour.

THE DEPUTY CHAIRMAN; One and a half hours more.

SHRI P. N. SAPRU (Uttar Pradesh): Madam Deputy Chairman, we have-before us two Reports, the Report of the Education Commission and the-Report of the Committee of Members of Parliament on Education which has sat to consider the Education Commission's Report. I would like to convey to the members of the Education Commission and the members of the Committee of Members of Parliament *on* Education *my* thanks for the ability with which they have carried or* their work.

I would like, before I proceed further, just to give you my idea of education and I would start with some-remarks of Mr. Bertrand Russell. He says that:

"The object of education is to create those impulses and attributes which will lead them to a life that does not involve any violent clash with others, because the things', that are desired are necessary for a man's own growth and his own constructive activities, not things: which essentially depend upon the-thwarting of others."

Similarly, I would just like to quote Whitehead on the aims of education. He says:

"Education with inert ideas in not only useless; it is above all

things, harmful—*corruptio optimi, pessima."*

I have quoted those two writers because I have come to develop a dislike for this term 'national integration'. I have begun to have a sort of strange feeling about the talk of national integration. I do not find any reality in this talk of national integration. My own feeling is that there is no right path now for that integration. And I want to be quite frank about it because we are going to have 14 regional languages and we are going to have competitive examinations in those fourteen regional languages. Now the House will forgive me if I make a personal reference to myself. I have been an examiner for the last so many years of my life. I have been an examiner for the thesis $_0$f Ph.D. and for LL.M. And I have also been an examiner for the UPSC. And I know how difficult it is fop an examiner to maintain the same quality or standard. I have been a liberal in my mind. One morning, I find that I have been less liberal. I had to evolve a system in the evening to ensure uniformity of standards. I pity the men or the teachers or the examiners who will be called upon to maintain standards in these fourteen languages.

Then, may I go on to the point about the use of the regional language? Well, I may frankly say that the present system in which we impart all knowledge through the medium of English language, I think, is altogether wrong. I remember my days when as a young boy I used to learn history in English and memorise the books that I was reading. I think that does not lead one to creative activity and speaking for myself, I am all for a change to the regional language. But I do not think that the change can be brought about in about five years' time. I do not know whether the Minister of Education has an Alladin's Lamp or whether this Government is working for socialism, an expression I have rather begun to distrust—not that I am not a socialist—with an Alladin's Lamp.

SHRI AKBAR ALI KHAN: But those who have recommended five years think that they have the Alladin's Lamp.

SHRI P. N. SAPRU: I do not think that the Education Commission has recommended a period of five years o$_r$ ten years for the change-over at the post-university stage. But I think that they are prepared to go even beyond ten years so far as higher education is concerned.

I think they have not recommended a two language formula because if we are going to be an independent State and an independent Republic, it is essential for us to have a link language. Now, what that link language should be is a different matter. Personally, I think that Hindi may be regarded as a link language. But I must allow myself to be guided in this matter by my friends of the South and not by my friends of the North, i am not prepared to break up the unity which we have built up through the ages on this language issue. Therefore, I would say 4 P.M. that the time indicated is a very short one within which this Government, with the resources that it has, will not be able to perform this very difficult task of having a changeover.

May I also say that if H not easy to translate good books? You have got to consider the copyright laws and you cannot produce books to order. When I think of the books that I read, when I started my career as a lawyer or when I was reading for my law degrees, I feel thrilled. I think of Blackstone, Stephen, Pollock, Dicey, Maitland, Storey, Kant and many others. They helped me make a lawyer with knowledge. I read Economics and I read History, and I can tell you what my reading was. i still do a certain amount of reading. I like to read the Guardian. I like to read the New Statesman and the Economist and similar other papers. I want all to continue in this country.

[Shri P. N. Sapru]

Madam, I am not one of those who would banish English. I am reminded of what a very great physician, who appeared before us when I had the distinction of presiding over the Committee on Higher Education, told us. He was Dr. Sathe of Bombay. One of our enthusiastic members, a very able man, asked him, "What about medical education in the regional languages or Hindi?" Dr. Sathe said, "Eliminate English by all means if you hate it, but substitute for it French, German or Russian; no Indian language will do". Well, I am sorry to say that there was truth in what Dr. Sathe said.

SHRIMATI YASHODA REDDY: But many have no courage to own it.

SHRI P. N. SAPRU: Madam, it is no use playing to the gallery. And this is our socialism. I am not so much afraid of socialism, as of the persons who claim to be socialists and who want to play to the gallery and who, in playing to the gallery, will destroy all the work that was done by men who built up the national movement in this country.

I am quite clear in my mind, Madam Deputy Chairman, that it is difficult to fix periods, five years or ten years. That should be the ideal and that should be the goal and we should work up to it. But remember that that goal will not be easily achieved.

May I say just a word about the talk of neighbourhood schools? I frankly do not like public schools. Those who talk of socialism, they have sent their children to public schools, i have not sent my children to public schools. I was educated myself in the Central Hindu College and the Ering Christian College. But I would say that in law it is not possible for us to do what you propose to do, and in a country such as ours it is desirable to have many varieties of schools. I think educational opportunity is fundamental to economic opportunity. I think it is the birth-right of every student to receive the

श्री तारकेश्वर पांडे : एक सवाल पूछना चाहता हूं ।

श्री प्रकाश नारायन सप्रू : आप मुझसे सवाल बाद में पूछियेगा । पहले पढ़ लीजिये तब सवाल पूछियेगा

would like, therefore, Madam Deputy Chairman, to take decisions which will help us grow to our full stature as a nation and which will have something of value to contribute to the world.

I would like to have research in every sphere of life. I would like to lay emphasis on fundamental research, not only on applied research. I would say that our educational problems are of such a character that I can go on talking for hours because I have devoted my lime and my thought to educational problems. Therefore, I would say that I have no Allauddin's lamp in my hand to do all the things that the Education Minister wants us to do in a five -year time.

SHRI NIREN GHOSH: Madam Deputy Chairman, I do not know what this Government would be able to do in this matter of language and education. I have sympathy for the Education Minister, a good man fallen into evil company. But let me now come to the point.

Language is a part of the innermost fabric of a man and of a definite group of people. That being so, languages can never be imposed on people. The first thing that one must seriously consider is that it cannot be imposed by whatever decree i or resolution or a Bill or an Act of Parliament. It is not possible. Therefore, I am definitely opposed to any three-language formula. The bilingual formula may do to some extent. Every person in our States must have the right to education in his own or

her mother-tongue. And if that is the regional language, that is well and good. But that is the first principle.

Madam, I do not call them regional languages because there is no national language in India. If Tamil is a regional language, Hindi is also a regional language. If Hindi is a national language, Tamil or Telugu is as much a national language. This should be remembered clearly. So the first thing is one must get one's education in one's own mother tongue in the different States of India and I do concur that it should be so at the university stage also. I am not for postponement for the simple reason that if it is introduced, those students who think that they require to study English books in addition, will do so of their own volition in order to enrich their knowledge in Physics, Chemistry and so on. But you cannot have any education in mother tongue in Physics Or Chemistry if you do not start it at all. Books and literature would not be published. Things would never come out. No research would be done in those languages. So I agree that at the higher stage, at the university stage, education should be in one's own mother tongue. And I am quite confident that if the help of English is required, the students would take the help of English in that respect. And then, there should be only one more language and it should be left to the option of the student. He should be allowed to choose whatever language he likes, Hindi or English or any other language. That should be left totally to his discretion or option. Nothing should be made compulsory in that respect. So, beyond that if we try to burden the students with three languages, education would suffer; it has suffered already. The standards of education have gone down. And I do think that the Education Minister, being an old educationist of repute, would agree with me on this point.

Next I would come to the question of link language. I do not think a link language is absolutely necessary as has been stated by many Members. No, it is not necessary. Let me tell you, for example, that in the Soviet Union, there is no link language. There are at least 20 to 25 regional, developed languages and education and research are being conducted in those languages. There is no official link language in the Soviet Union.

AN HON MEMBER: The Russian language is there.

SHRI NIREN GHOSH: But there is no official link language. There is nothing mentioned in the Constitution of the Soviet Union and the Soviet Parliament has not passed anything... *(Interruption).* They learn Russian because it is the most developed language. If Hindi is to become the link language at all in that way, all Indians should take it up, as the people of the Soviet Union, of their own volition and le*arn it. It is not imposed. They learn Russian of their own 'accord because it is the most developed language. So if the people of India... *(Interruption.)* I have no time. So if the people of India of their own accord wish to learn one particular language as the most developed language, as the best medium of intercourse and if Hindi comes to be ac-! cepted for this purpose, then only it i can become the link language; otherwise not. I am not in favour of making any language by fiat or decree the link language of India. If you do so, I think the people in different States have every right to rebel and revolt against that, and they will be justified in doing so. So by fiat or compulsion, nothing can be solved in the matter of language. Now I think Hindi has become synonymous with Hindi revivalism. At least that is the position of the J'an Sangh; they have become associated with the forces of Hindi revivalism. You see in Uttar Pradesh they have not recognised Urdu. I do not know what the position of the P.S.P. is, but I am sorry that the S.S.P. is a party to this. Should nol the S.S.P. and the P.S.P. have re-

[Shri Niren Ghosh]

volted against th'at decision? This has become synonymous with Hindi revivalism. It is extremely ominous to democracy. So in course of time Hindi may become the link language. It may become; it has the possibility. But it cannot by a Constitutional decree..,

(Interruption)

श्री तारकेश्वर पांडे : अगर आपकी इस बात को स्वीकार कर लिया जाय कि हिन्दी भाषा हिन्दू धर्म का पुनरुद्धार कर रही है तो क्या भारत का संविधान, जिसके मातहत आप बैठे हुए हैं, जिसमें हिन्दी को राष्ट्रभाषा बनाया गया है, हिन्दू धर्म से प्रभावित है ? आपने संविधान को पढ़ा है या नहीं ? आपने उस से क्या यही उपदेश लिया हैं?

SHRI NIREN GHOSH: Let me tell you about the Constitution. This question was passed by a few votes, perhaps by one vote or two votes or something like that.

SHRI GANGA SHARAN SINHA: No. I would like to inform the House that so far as this official language question was concerned, it was passed unanimously by the Constituent Assembly. The voting was only regarding the numerals. That was in the Congress Party, not in the Constituent Assembly, Only regarding numerals there was a voting in the Congress Party and these international numerals were passed by one vote, perhaps by the casting vote of the President of the Congress Party, But in the Constituent Assembly, both the language and the numerals were passed unanimously without a division.

SHRI NIREN GHOSH: The Constituent Assembly at that time represented the Congress Party...

SHRI GANGA SHARAN SINHA: No.

SHRI NIREN GHOSH: It was not even on the basis of adult franchise. Anything adopted by a body which was on the basis of only 30 per cent of the franchise cannot be a sacrosanct thing. That position is never acceptable, I do think that Hindi has the potential, but let it develop in its own course, not by any decree. Now even the Bill incorporating the assurance of Nehru is not coming in this session...

SHRI G. RAMACHANDRAN (Nominated): You said the Constituent Assembly did not consist of members elected on the basis of adult franchise, etc., that it was a Congress Constituent Assembly, etc,, etc. Will you, therefore, repudiate the Constitution to-day on that basis?

SHRI NIREN GHOSH: I think it would not be a bad thing if we have a fresh Constituent Assembly on the basis of adult franchise to go into the whole thing...

SHRI G. RAMACHANDRAN: My question is: Will you dare repudiate the Constitution On that ground?

SHRI NIREN GHOSH: No, that question does not arise. It is not so sacrosanct or Sacred. There have been 18 amendments ...

SHRI G. RAMACHANDRAN: Who passed the amendments?

SHRI NIREN GHOSH: Do not talk of repudiation. I have not brought in that question. Do not try to put things to me which I have not mentioned and try to score a point. I say that no Constitution, not even this Constitution, is sacred or sacrosanct and I stand by it. That does not mean repudiation.

SHRI G. RAMACHANDRAN: Is there anything sacrosanct to you in politics?

SHRI NIREN GHOSH: In politics, the people are sacrosanct, and serving them and ending exploitation are sacrosanct and sacred.

SHRI LOKANATH MISRA (Orissa): You should have staid Communist ideology also.

SHRI NIREN GHOSH: So that much for the link language. I have -every respect for Hindi and let Hindi be encouraged. And in course of time when it comes to be accepted by the whole people of India, let it become the link language. But I am not in favour of any decree 'and forcing it down the throats of the people. Let me tell you this is the "way to dismember India; and the course I have suggested is the way to unite India. You are following a course of action which may lead to the dismemberment of India. I suggest a course of action for the people •of India to come together and unite and voluntarily cement that unity. But you do not want that cementing, of unity. I lay that charge at your door.

Now I come to another point. This is about the universities. Now what I want to say on this score is that the universities have to-day become ®n appendage of certain politicians; sycophants and bureaucrats are being placed in position. In the olden days it was different. I do not know about other States, but I can at least say that the University of Calcutta that Shri Ashutosh Mukherjee built up, even in opposition to the British, could gather together 'all the best talents of India. At that time it was not full of sycophants. Now it hag become an adjunct or appendage of certain politicians. This position should be removed once for all if education is to make a new start. The Chinese people were backward in education compared to us. Yet within a few years chey have become most forward. Now we do not see eminent men of science and letters from the soil Of India Why is it? It seem$_s$ that the renaissance of India is lost. It seems to belong to a bygone age. Let us remember that in those days those who fought against the British built institutions and those institutions were the homes of new progressive and democratic ideals. The Education Minister himself was the Vice-Chancellor of the Jadhavpur University which is a national institution built by Aurobindo and Shanti-niketan was built by Tagore. Those institutions were the homes of new, progressive, democratic- ideas. NovJ the universities have become stultifying, moth-eaten, stinking. A new awakening must grow in the administration of the universities. The curriculum should be revised so that all progressive ideas may have a place in the universities so that they can blossom forth.

Regarding students' unrest, the students' rights are not properly recognised everywhere. Last year or the year before there were student troubles and they swept India from one part to the other and what was the root cause of that? Even minor things were sought to be controlled. They were not given their ordinary, demo -cratic rights even in the colleges, lei alone the schools. So I would like to have full-fledged democratic students' unions with proper rights so that they can also respect themselves. A student of 22 became the Prime Minister of England. They must have learnt to respect themselves. If self-respect is denied to them, how do you expect our children to become eminent scientists or brilliant scholars in this atmosphere? You want to mould them in our corrupt, backward ideology and stifle them in every way. This position should be taken note of.

I have come across certain institutions run by foreign missionaries, for example in Darjeeling, where every student is made to kneel down and pray to Jesus Christ. I suppose India is secular and I wonder how things can go on like this. Are we wedded to secularism or religious schools? If religious denominations run their schools and if they inject the religions into them, whether they are founded by Vivekananda or Ramakrishna Mission or Bhartiya Jar Sangh or foreign missionaries, it i*

[Shri Niren Ghosh]

against secularism. Religion must be completely detached from educational institutions and it is an infringement of the secular character of the Indian State. This practice should be stopped. Neighbourhood school idea I support. About finances, wherefrom will you get finance to develop education? I do not know whether our Government would ever sanction the money in 5 or 10 years. Why is it that Members said that 5 years will not suffice? It is because of that. They talk of everything like democracy, secularism, socialism etc. which they never mean but they do not mean to do anything to improve education and find finance for that. That is the position of the ruling party and the Government. I do not know if these are pious wishes. I would very much like that compulsory and free education up to 14 years and within 5 to 10 years if India is to go forward, and to provide a base upon which a whole new generation can be reared, a generation that is progressive, democratic, that has the courage to win new worlds and new unexplored regions. I do not know whether the Minister will be able to do anything but if he will try to do anything, we have every sympathy for him.

SHRI JAIRAMDAS DAULATRAM: Madam, let me first of all take up a second or two to express appreciation of the labours of the Education Commission and of the Parliamentary Committee and, behind all that, of the Minister and the administrative machinery of the Ministry. They have tried to deal with a very, very important question, a question which should have been dealt with twenty years ago. When the nation got its freedom, one of the basic questions which should have been considered, decided and implemented was the question of education. I do not want to go by any definition of education whoever may be the authority. We face the problem of training our nation along certain 'ires, and of developing in the individual units of the nation certain-qualities and virtues which are necessary for the building up of the nation and the progress and welfare of th» people. Education becomes an instrument with which to achieve this purpose. Whatever other purpose education may have, I am not so much concerned with it, I do not want to follow any book, any dictionary or any definition by anybody. We had: other tremendous problems facing us at that time but it should have been possible for us to attend to this also. And we have, missed the bus almost. It should have been possible for us then to set in motion a line of action to be implemented so that the young *men* of to-day's time would have been the product of that type of training. We did not do it and now we are trying to deal with the problem in the middle of the stream with increasing difficulties to face. At the same time what I feel is that in discussing this problem in Parliament, the problem which has so many facts,, a problem on which there are vital, basic, honest differences, it is not. necessary or desirable to come to any iormal, concrete decision on any particular proposition here. That is why the Minister wisely has put before us not a motion for voting but a motion for consideration and at the end of this discussion and this consideration, the Government will be in a position to formulate a line of action which also has to be elastic to meet the needs and views of the people as they become apparent. One thing which we know but which we are not, in. my humble opinion, constantly conscious of, one thing which we do not ordinarily act upon, is the basic fact that India is a nation of a very composite character. We have *so* many races—Aryan, Dravidian, Austria, Indo-Mongoloid, Anglo-Indian, Indo-European, various races, various languages, various cultures. And it is this huge country which we are expected to govern for the welfare of all. In a situation like this I thin*

the unity that is possible is not a unity through this or that language. The unity that is necessary and possible and lasting is a unity of hearts. There was a time in our freedom movement, some 30 or 25 years ago when we almost forgot whether we came from this or that region and we adopted new ways 'and made changes in dress, and learnt other languages, all under that emotion of what I may call a real unity of hearts. When we remember that picture and when we see today's picture, we cannot but feel very very sad. And this huge task of reconstructing that unity is now being faced by us and by the Minister of Education through the instrument of education.

I would, therefore, suggest with great humility tne consideration of one basic principle for our country and the adoption of that principle and the implementation of that principle in practice. We must in each area divest ourselves of what I may call the majority complex. In each area, in each territory, in each State there is a strong majority complex. The majority feels that this area is ours. The majority feels that the minorities are something else. So the majority functions in such a manner as to make the question of minorities a problem. All the problems of minorities are the result of a certain complex which the majority has. What I say may be unpleasant to some, but this is my honest feeling. It was that majority complex which led to certain developments years ago and we ourselves with our own hands rent the handsome saree of what we call Bharatmata and split up Madras into two—Telugu and Tamil. Many things happened, many sad things happened and the nation surrendered to them and there have been rents after rents. We have torn out the saree of the country and today we find there are so many rents and so many tears that we feel the need for something to link up those rents, something to unite the saree again, to make it handsome, pretty and useful. Therefore, I appeal to the majorities wherever they are, and to the total Indian majority, that we must deal with the minorities as members of the national family. We have not that consciousness that these are our co-members, the members of the national family in our area. As a matter of fact, the majority is the trustee of the minorities and the real test of India's nationalism is that the majority should be trustees of the smallest minorities in the country. It is only when the majority feels like tnat and functions like that that our nation can really stand united. Then, language question or no language question, the nation stands united.

That does not mean that we do not want a common link and that we do not want to use a link language. We must have a common language. If I address a letter in my language or Hindi or English to my friend, Mr. Niren Ghosh, the postman would not be able to deliver it to Mr. Ghosh because the postman would know only Bengali and he would never have learnt these other languages. Unless there is a link language available to us, a common language, how is it possible for this country to function as one country? It may be that certain people are interested in dividing the country. It is possible that it would serve their purpose to have greater and greater regionalisation, greater and greater division so that each area may shape its future as it likes. It is a dangerous thing if we do not have the feeling that we are all Indians belonging to one national family.

With these preliminary remarks, I will now deal with a few concrete things. In the context of this majority feeling I would refer to what has been said in paragraph 10 of the Parliamentary Committee's Report. On page 3, para 10, it is stated:

"Classes I—X: The parent has a right to claim primary education

[Shri Jairamdas Daulatram]

in the mother tongue of his child. Every effort should be made to meet this demand."

In my humble opinion this is wrongly out. There should be no question or Waiting for a demand from a parent and then to satisfy that demand. As you see, it is laid down in our Constitution in article 350A which was put in later on in view of developments in the situation in the country:

"It shall be the endeavour of every State and of every local authority within the State to provide adequate facilities for instruction in the mother-tongue at the primary stage of education to children belonging to linguistic minority groups;".

It means that the initiative has to be taken by the State because the is dependent on the right type of the national family. Hence, whether it is Uttar Pradesh or any other part of the country, they must, of their own accord, in the neighbourhood where the minority is living, set up schools for the minority language. Therefore, I suggest that when the final decision is taken, it must be put children in my arms and lifter it high less in terms of what has been laid down in our Constitution.

Then there is another thing in the name paragraph. It is stated °n page 4:

"However, it is desirable that a pupil should, before he completes his school education, acquire some knowledge of three languages—regional language/mother tongue, Hindi, and English or any other language."

Now let us take the case of Kashmir. In Kashmir Urdu is the official language, the language of administration. The Kaslimiris speak it and the mass of the piople learn it in the schools. Then they must learn Hindi because we are trying to use it as the official language. And then it is said, they can learn "English or any other lan^ guage." Thus if a Kashmiri wants to continue his mother-tongue, he must give up English. If he wants to learn English, he must give up his mother-tongue. For the next 15 or 20 years there will be a demand for learning English. Whether we visualise it or do not visualise it. This is a fact of life. Now, what will be the position in Kashmir? They must give up their mother-tongue before class X and take to English or take up the mother-tongue and give up English. Therefore, I feel that this formula has to be further considered. Take the case of Maharashtra. In Maharashtra the language of administration is Marathi, What is going to happen to the Gujarati-speak-ing people, to the Punjabi-speaking people, to the Sindhi-speaking people and the Marwari-speaking people? Tli ere also they must learn Hindi. They must learn Marathi. Then the third language will be either the mother-tongue or English. Thus they will give up the mother-tongue even before they pass their school examination. This, in my humble opinion, has to be reconsidered and in reconsidering it I would love to discuss with the hon. Minister how this can be redrafted.

And then there is the provision for adequate safeguards for minorities. This must be spelt out properly. I understand that certain details are being worked out. But it is desirable and will be in the interest of smooth working to have these details discussed with the majorities and the minorities. A small meeting of the representatives of the majorities and the minorities should be convened so that these details can be worked out because everything depends on the details. This formula of adequate safeguards cannot, in my humble opinion, by itself satisfy the situation.

Then I come to the fundamental question before the country. This is also linked up with what I said at the start. We have many schemes, economic schemes, agricultural schemes, industrial schemes; schemes for education, culture and so on. They are very fine schemes, finely thought out and considered and we have to finance them spending crores of rupees. But who will carry out these schemes? Unless the proper human material is there which is going to implement these things we cannot get the results that we want. If a Japanese workman is able to produce six spectacle frames by one stroke and the Indian can make only two, if the Japanese workman can manage twelve looms at a time and the Indian can manage only three, then there must be something wrong somewhere. I do not want to give more illustrations because time for it is lacking.

Now, may I, just to lighten the serious mood of the House, relate a story? It will show how our progress is dependent on the right type of teachers. I held a certain position in Assam and I made it a point to get close to the local people. Whatever my status, I visited a local primary school and went to the lowest class and just to show goodwill and good feeling for the local people, I took up one of the children in my arms and lifted it high up just as I would lift my own child and the child looking down smiled at me and I smiled back and the teacher Was very happy that I was pleased with one of his boys and I had taken him up in my arms and the whole face of the teacher was wreathed in smiles. I suppose when he went home he must have narrated the story how the Head of the State came, how he lifted high up one of his pupils in the class rooms. After a week or two or three weeks—this was a local school—I went to another school that was being run by the Roman Catholics, Don Bosco School. There also I went to the lowest class. Khasi children were being educated there. They are the people who belong to the Hills, And I always made it a point to be as close 'as possible to the Christian community of Khasis. Whatever their religion they are Indians. They had been under the British rulers and I wanted to come as close as possible to them to make them know and feel what the Indian rulers are like and how they treat them. I went to this Khasi school and there were 30 or 35 children spread out in a semicircle, all standing, some rich, some poor, some middle class but all clean and neat. Some were wearing cotton, some silk and so on. There also I picked up a small boy, I lifted him up, he smiled at me and I smiled back. But then something happened? The teacher, an Engish girl of 25 or 28 years came up to me and said: "Sir, the other children will feel jealous. I have got to create in these children a sense of fellowship, a sense of comradeship a sense of equality and co-operation." She said these children must not have the feeling that any boy is more favourably treated. She wanted to create that kind of atmosphere. I immediately put down the child and I learnt one of my lessons in education. The teacher must be clear about the objective; what is to be made of the children, what type of character should be built up, what type of mental make-up the children ought to have if India is to grow rich, if India is to grow prosperous, if India is to progress, if India is to be united, I therefore say that the training of teachers is the basic thing in all these schemes. The whole thing will go to pieces and we will not get the results unless proper teachers are there and my cheapest remedy for getting proper teachers is that the training institutions where these teachers are trained must themselves be staffed by competent trainers. I would get the pick of men in the country; I would get the pick of men from any part of the world. I do not mind it because

[Shri .Tairamdas Daulatram]

many countries send for foreign experts. We also had them in this Education Commission. I would get the pick of men and I will try to have as many training institutions as possible in the country and concentrate on that as one of the basic fundamental schemes- -the plan to train our teachers prwperly.

Secondly I would always make the Headmaster's post a selective post. The Headmaster leaves his stamp on the school. It is he who, to some extent, moulds the attitude, controls the functioning even of the teachers. Therefore the Headmaster's post and the training of teachers, these are basic fundamental things.

I do not want to take more time; only one more minute. Unless we take steps to educate the coming generation on certain lines—I am talking not of political lines but about the make up of the mind and the qualities that are needed like self-confidence, spirit of co-operation efficiency etc.—we cannot get results. After all, Germany within a few years was able to raise itself up from the ruins of war; why should it take up 20 years and even then without any substantial progress? Look at our roads. Who makes the roads? The people who make them have received primary education but look at the manner in which our roads are made. There is lack of efficiency, integrity and honesty 'at all levels. Every one of us has faced the ditches on the roads. I am giving that only as a small illustration; there are many such illustrations. We must create a nation of efficient and competent men. That can only be done if we train them properly; that can only be done if we properly train our teachers who train them; that can only be done if we concentrate on these basic factors. J have mentioned. That is all I have to say.

Thank you.

श्री तारकेश्वर पांडे : उपसभापति महोदया, यह बड़ा गम्भीर विषय है और इस पर गम्भीरता के साथ विचार करने की आवश्यकता है । सब से पहले तो मैं यह निवेदन करना चाहता हूं कि यह जो एजूकेशन कमिशन है, यह इतना बड़ा प्रपंच है, हमारे घोष साहब जरा सुन लें क्योंकि आपका हिन्दी भाषा से द्वेष प्रतीत होता है । यद्यपि हिन्दी भाषा भारत के 37 करोड़ व्यक्तियों की भाषा है, इतने कंठों में यह निवास करती है और अगर एक बार स्व एक साथ मिलकर बोलें तो भारत की धरा कांप उठे । आप क्या इस चीज को भी समझ नहीं पाते हैं ?

इसलिए मैं कहना चाहता हूं कि यह जो एजूकेशन कमिशन बनाया गया था वह एक प्रवंचना थी और इसी पर मैं अपने विचार व्यक्त करना चाहता हूं और दो शब्द कहना चाहता हूं । यह कितनी बड़ी प्रवंचना है कि इस कमिशन में जापान, फ्रांस और इंग्लैंड के महापुरुषों को, विद्वानों को इस की समिति के लिए चुना गया । भारतवर्ष की तामाम भाषाओं के सदस्यों को चुना गया, लेकिन हिन्दी और संस्कृत के क्षेत्र के विद्वान इस कमिशन को नहीं मिल सके जिनको वह उनका सदस्य मनोनीत कर सकती । यह कितना बड़ा दुर्भाग्य है ? इस बारे में आप हमारी आत्मा से पूछिये, हमारी जगह पर बैठकर पूछिये कि हमारी भाषा और उसकी जननी संस्कृत के साथ कितना अनर्थ किया गया है ? हमें अपनी भाषा के साथ कितना प्रेम है और जब हम उसके साथ अनर्थ होते देखते हैं तो हमारी आखों में आंसू छलछला जाते हैं । जब हमारी भाषा के संबंध में इस तरह के आक्षेप किये जाते हैं तो हमारी आत्मा में क्या प्रतीत होता है, यह हम से पूछिये । मैं यह निवेदन करना

म स चाहता हूं कि 37 करोड़ व्यक्तियों नहीं कोई भी व्यक्ति कमिशन का सदस्य उसके हो सका, तो उसकी रिपोर्ट तथा नहीं विवरण का क्या हाल होगा, यह मैं कह सकता हूं ।

दूसरी बात मैं यह कहना चाहता हूं और अपने पूर्ववक्ता से सहमत हूं कि इस कमिशन की रिपोर्ट पर विचार करने के लिए हम यहां पर उपस्थित हैं । हमारे सामने न कोई प्रस्ताव है और न कोई हम उसमें संशोधन ही कर सकते हैं । यह ड़े दुर्भाग्य की बात है और इससे मन में ड़ी निराशा होती है । ज हम अखबारों में पढ़ते हैं कि कैबिनेट ने यह निर्णय किया है अमुक विद्वान ने यह राय दी है और कभी यह पढ़ते हैं कि हिन्दी भाषा का भविष्य उज्जवल नहीं है, यह लादी नहीं जा सकती है, तो हमारे हृदय की तंत्री बज उठती है । तब मैं यह सोचता हूं और यह जानना चाहता हूं कि इस देश की जो लिंक लैंग्वेज है जिसमें हम और आप , राजभाषा में जो व्यवहार करते हैं , वह अंग्रेजी है । कभी आपने सोचा है कि भारत की भाषा क्या थी ? अगर भारतवर्ष अंग्रेजों के मातहत नहीं होता, अंग्रेजों का गुलाम नहीं होता, तो क्या यहां पर अंग्रेजी भाषा चल सकती थी ? मैं यह जानना और पूछना चाहता हूं कि इससे पहले भारतवर्ष की भाषा क्या थी? खास तौर पर उत्तरी भारत में ज यहां पर पठानों का शासन था, ज यहां पर मुगलों का शासन था, इस देश की भाषा क्या थी ? उस समय जो यहां की भाषा थी क्या वह जनता की प्रचलित भाषा थी ? हैदरा ाद की राजभाषा क्या थी ? उसमानिया विश्व-विद्यालय की भाषा क्या थी ? क्या वह भाषा जनता की भावना को व्यक्त करती थी ? उस समय जो भाषा थी वह किसी की आज्ञा का प्रतीक थी और वही जनता की भाषा बनी । आप लोग कहते हैं कि अगर हिन्दी लादी गई तो विद्रोह हो जायेगा । हिन्दी समर्थ हैं, यह मैं जानता हूं और मैं इन बातों से विचलित नहीं होता हूं । मैं हमझता हूं कि यह इस देश का दुर्भाग्य है कि इसके लोगों ने और कांग्रेसजनों ने इस देश की संस्कृति और उसकी सभ्यता को नहीं समझा । इस देश का यह बड़ा दुर्भाग्य है कि उसके संचालकों ने भी उसकी संस्कृति सभ्यता को और भारत की आत्मा को नहीं समझा ।

आप जरा इस बात को सोचिये और एजूकेशिन मिनिस्ट्री को ही ले लीजिये कि यह कितना बड़ा दुर्भाग्य है कि हमारी एजूकेशन मिनिस्ट्री भारतवर्ष की शिक्षा के संबंध में, उसकी संस्कृति के संबंध में और उसकी सभ्यता के संबंध में वह इतने सालों तक कुछ नहीं कर सकी और इस बात को नहीं समझ सकी । मैं वर्तमान एजूकेशिन मिनिस्टर की कोई प्रशंसा करना नहीं चाहता हूं, लेकिन मैं यह कहना चाहता हूं कि जो शिक्षा मंत्री इस समय मनोनीत हुए ,हैं उन्होने भारत की संस्कृति , सभ्यता और जनता की अवाज को पहिचाना और फिर इस तरह का कदम उठाया । उन्होंने जो कदम उठाया है वह एक सही कदम है और उसमें उन्हें सफलता मिलेगी, इसमें कोई संदेह नहीं है तथा भारत के करोड़ों नर नारियों का उन्हें समर्थन प्राप्त होगा ।

SHRIMATI YASHODA REDDY: The Education Minister must listen to him. He is pi aising you; please listen.

THE MINISTER OF STATE IN THE MINISTRY OF EDUCATION (SHRI BHAGWAT JHA AZAD): We heard condemnation also. We have heard praise and condemnation, both.

SHRI TARKESHWAR PANDE: I am praising you also, Madam.

[श्री तारकेश्वर पांडे]

एक नेबरहुड स्कूल की चर्चा है। उपसभापति महोदया, मुझे क्षमा करेंगी, मैं चाहता हूं कि कृपा कर के खड़े हो जाय ऐसे संसद् सदस्य या हाथ ही उठा दें, जिन संसद् सदस्यों की शिक्षा पब्लिक स्कूल में हुई है। लोक सभा और राज्य सभा के आज से नहीं, 1952 से आद्योपात सब सदस्यों के जीवन चरित्र को मैंने पढ़ा। मुझे भूले भटके कोई दिखाई पड़ता है संपन्न परिवार का जो, कांग्रेस में नहीं था, अब कांग्रेस में शामिल हो गया है। किन्हीं व्यक्तियों को मैं देखता हूं जो पब्लिक स्कूल में पढ़े हैं। कुछ नेबरहुड स्कूल का विरोध करते हैं। गुजरात विद्यापीठ के स्नातक, जो सरदार पटेल के सपुत्र हैं, उन्होंने विरोध किया है। बड़ा दुर्भाग्य है। उनके पिता इसके समर्थक थे और उनको उन्होंने भेजा था गुजरात विद्यापीठ में और हमारे सामने यह महिला जो बैठी हैं, सरदार की सुपुत्री, वे भी गुजरात विद्यापीठ की स्नातिका हैं। न मालूम कि प्रांच में वे पड़ गये और पब्लिक स्कूल का समर्थन कर बैठे। यह पब्लिक स्कूल जो है वह हमारे शरीर पर एक कुष्ठ है और इसका जल्दी से मूलोच्छेद करना चाहिये। अमीर आदमियों की यह संस्था है। जो लोग समाजवाद को मानते हैं, जो जनता को मानते हैं, जो जनता की आवाज को पहचानते हैं वे इसका कभी समर्थन नहीं कर सकते हैं। उदाहरण स्वरूप मैं आपके सामने यह प्रस्तुत करना चाहता हूं कि यह जो आधुनिक भारत बना हुआ है, इसके निर्माण में किस का हाथ था? राजा राम मोहन राय, रामकृष्ण परमहंस, स्वामी विवेकानन्द, दयानन्द सरस्वती, महात्मा पंडित मदन मोहन मालवीय, पंडित मोतीलाल नेहरू, राजर्षि पुरुषोत्तम दास टंडन, इनमें से किसी ने पब्लिक स्कूल का मुंह नहीं देखा था, जो आधुनिक भारत के निर्माता हैं। यह जो भारत वर्ष का शासनतंत्र है . .

DR. ANUP SINGH (Punjab): What about the late Prime Minister?

श्री तारकेश्वर पांडे : हमारे लेट प्राइम मिनिस्टर हिन्दुस्तान के किसी पब्लिक स्कूल में नहीं पढ़े थे।

श्रीमती यशोदा रेड्डी : उनके बच्चे तो पब्लिक स्कूल में पढ़े थे।

श्री तारकेश्वर पांडे : इस देश के किसी पब्लिक स्कूल में नहीं पढ़े थे। हिन्दुस्तान के राष्ट्रपति हुये राजेन्द्र बाबू, डा० राधाकृष्णन डा० जाकिर हुसेन, वे किसी भी पब्लिक स्कूल में नहीं पढ़े थे, उन्हीं स्कूलों में पढ़े थे जिन स्कूलों में हम और आप पढ़ते हैं। मैं क्रान्तिकारी जीवन से और उसके इतिहास से थोड़ा सा सम्पर्क रखता हूं। रास बिहारी बोस, सरदार भगत सिंह, बटकेश्वर दत्त और चन्द्र शेखर आजाद, जिन्होंने भारतीय राजनीति की पताका फहराई थी और इसी असेम्बली में सरदार भगत सिंह ने बम फैंका था, इनकलाब जिन्दाबाद के नारे लगाये थे, वे किसी पब्लिक स्कूल के विद्यार्थी नहीं थे। आप पब्लिक स्कूल के मोह में इतना क्यों पड़े हुये हैं। हमारी शिक्षा क्या है? हमारे अन्दर निहित भावना जो है, उसको हम पहचानें।

"उत्तिष्ठ, जाग्रत प्राप्य वरान निबोधत:"। यही शिक्षा का उद्देश्य है और कोई दूसरा शिक्षा का उद्देश्य नहीं है।

जो लोग अंग्रेजी भाषा का समर्थन करते हैं, दो शब्द उनके बारे में भी कहना चाहता हूं। यह कमेटी जो बनी थी, उसमें मैं एक छोटा सदस्य था। उसके

पूरे ब्यौरे में मैं नहीं जाना चाहता; क्योंकि हमारे वरिष्ठ नेता, गंगा बाबू ने उसका विवरण कुछ दिया है । इसकी जो

श्री तारकेश्वर पांडे : Bhojpuri is not at all Hindi. भोजपुरी हमारी मातृ भाषा है । मैं आपसे कहता हूं कि यह कितना बड़ा हमारा त्याग है । अगर पुरातन इतिहास भारतवर्ष का पढ़ा जाय, मौर्यों का इतिहास और गुप्त युग का इतिहास, यह भारतवर्ष का पुरातन इतिहास है । इसमें भारतवर्ष कोई युगों से गुजरा है । वह कौन प्रदेश है ? वह भोजपुर

भी आपके सामने उपस्थित हैं । "अंग्रेजी हटाओ, देश बचाओ, हिन्दी चलाओ" यह संयुक्त सोशलिस्ट पार्टी का नारा है और दस्तखत करते हैं उस पर कि जब तक हिन्दुस्तान का कोई भी क्षेत्र यह स्वीकार न करे कि हिन्दी को राजभाषा स्वीकार किया जाय, तब तक अंग्रेजी राजभाषा बनी रहे । वह समय कब आयेगा ?

मैं भोजपुर का रहने वाला हूं । मेरी मातृ भाषा भोजपुरी है । हम अपने घर में और अपने व्यवहार में नित्य ही भोजपुरी भाषा का उपयोग करते हैं । यह प्रश्न संकल्प का है ।

SHRI CHITTA BASU (West Bengal): Bhojpuri is not Hindi?

प्रदेश है, जहां के हम रहने वाले हैं, जहां के प्रथम राष्ट्रपति हुये, श्री लाल बहादुर शास्त्री प्रधान मंत्री हुये, जयप्रकाश नारायण जी उसके आज लीडर हैं, राहुल सांकृत्यायन का नाम आपने सुना होगा, इसी प्रकार बड़े बड़े लोग उसमें पैदा हुये । हमने उस मोह को छोड़ दिया कि हमारी भाषा जो है, उसमें हम पढ़ें और भाषा के प्रश्न पर हम युद्ध करें । हमने हिन्दी को स्वीकार किया । हिन्दी को क्यों स्वीकार किया ? क्या इसलिये स्वीकार किया कि साम्राज्यवादी भावनाएं हमारे अन्दर थीं ? क्या इसलिये स्वीकार किया कि हम उर्दू भाषा का विरोध करना चाहते है ? क्या इसलिये स्वीकार किया कि तामिल, तेलगू मलयालम और कन्नड़ के हम विरोध में हैं ? जो लोग ऐसा समझते हैं, उनके ऊपर मैं दया करता हूं । हम यह समझते हैं ईसा ने कहा था कि जो तुम्हारे ऊपर आक्रमण करता है, उसके ऊपर दया करो वह नहीं जानता है कि किस पर हम आक्रमण कर रहे हैं । इसलिये वे दया के पात्र हैं । हम साम्राज्यवादी भावनाओं से प्रेरित हो, कर के हिन्दी के पीछे नहीं चल रहे हैं । हम चाहते हैं कि भारतवर्ष की एक भाषा हो जिसमें भारतवर्ष के लोग बोलें-चालें आदान-प्रदान हो और वह भाषा कौन हो सकती है ? हम यह समझते हैं कि बहुसंख्यक लोग हिन्दी बोलते हैं, तीर्थ स्थानों के लोग हिन्दी बोलते हैं, समझते हैं । हम बंगाल में जाते हैं, मद्रास में भी कतिपय स्थानों में गये हैं, करीब करीब दक्षिण के जितने राज्य हैं, उन सब में मैं गया हूं और वहां मुझको कोई बड़ी दिक्कत नहीं मालूम होती है । थोड़ी बहुत सब हिन्दी समझ लेते हैं और उनको समझाया जा सकता है ।

मैं इस विचार को रखता हूं कि हमें चाहे आप जितना उत्तेजित करें, विद्रोह

[श्री तारकेश्वर पांडे]

करने की भावना को व्यक्त करें और विद्रोह करने को अग्रसर हो जायें, तो भी आप यह मान कर रखिये कि हिन्दी इस देश की लिंक लैंग्युएज, कामन लैंग्युएज है, इससे मैं सहमत नहीं हूं, हिन्दी इस देश की राष्ट्र भाषा है, इसको संविधान ने स्वीकार किया है और उस पर हमको चलना चाहिये। संकल्प का अभाव था, आदर्श का अभाव था और यह समझिये कि इस भारतवर्ष के दुर्भाग्य से इन बीस वर्षों तक हम इसको संचालित नहीं कर सके।

श्रीमती यशोदा रेड्डी : कसूर किसका है?

श्री तारकेश्वर पांडे : कसूर आपका है, जो इस कांग्रेस दल के संचालक हैं, उनका है। यह उनका जघन्य अपराध है कि हिन्दी के साथ उन्होंने खिलवाड़ किया, भारत के साथ खिलवाड़ किया।

दूसरी बात मैं मिस्टर घोष से कहना चाहता हूं और उसके बाद मैं समाप्त कर दूंगा। आपका कोई दोष नहीं है। रूस की भाषा क्या है? रूसी सरकार की भाषा क्या है और उसके छोटे-छोटे जो राज्य हैं, उनकी भाषा क्या है? बंगाल, आसाम, मद्रास, मैसूर, केरल आदि सब अपनी भाषाओं में बोलें और उसमें अपना व्यवहार करें। मगर देश की कोई एक भाषा होनी चाहिये और वह भाषा क्या अंग्रेजी हो सकती है? मैं एक उदाहरण आपको दे दूं और उसके बाद मैं समाप्त कर दूंगा। आपका कोई दोष नहीं है। आपको बंगला में बोलना चाहिये, बंगला तो मुझे प्रिय और पसन्द है। उसको मैं कुछ समझ भी पाता हूं। मुझे जहां तक स्मरण है, नाम मुझे याद नहीं है, एक बहुत बड़े दार्शनिक थे, जो चीन में किसी राजा के यहां गये और उन्होंने उनसे कुछ बातें कहीं। राजा बड़ा प्रसन्न हुआ और प्रसन्न होने के बाद अपनी जेल से उसने तमाम कैदियों को छोड़ दिया। जो मछलियां उसके यहां बन्द कमरे में रखी हुई थीं, जैसी कि बड़े लोग रखा करते हैं, उनको भी ले जाकर के उसने नदी में छोड़ दिया। दूसरे दिन जब वह सैर करने के लिये निकला, तो उसने क्या देखा, श्री घोष, आप ही को उसने उसमें देखा। क्या देखा?

4 P.M.

देखा कि वे चारों तरफ गोल-गोल घूम रहीं हैं। उन्होंने दार्शनिक से पूछा कि ये क्यों गोल-गोल घूम रही हैं, ये सीधी क्यों नहीं तैरतीं? दार्शनिक ने उत्तर दिया कि ये गुलामी की प्रतीक हैं, जब तक ये मछलियां जीवित रहेंगी ये कभी सीधी नहीं चल सकतीं, गोल ही चलेंगी; क्योंकि इनका जन्म गुलामी में हुआ है, इनकी पैदाइश गुलामी में हुई है। यद्यपि स्वतंत्रता के लिए आपने संग्राम किया, त्याग किया, बलिदान किया, लेकिन गुलामी से मुक्ति आपकी नहीं हुई है। गुलामी से अपनी मुक्ति कीजिए, अमर भारती की उपासना कीजिए, तभी यह भारत एक रहेगा, अक्षुण्ण रहेगा, इस देश का भविष्य उज्जवल होगा। जय हिन्द, जय भारती।

SHRI G. RAMACHANDRAN: Madam Deputy Chairman, it fills my heart with hope that on the subject of education there is so much consistent interest in the House. I have seldom seen any other subject on the floor of this House exciting such profound interest as this subject. It is not merely education we are discussing. We are discussing the report of the Education Commission and the subsequent report which Members of Parliament joined together to write. The first question I would like *to* ask the Minister of Education is this. Where th°re is a difference between

the recommendation of the Education Commission and the report of the Members of Parliament, which would gain precedence?

SHRi A. D. MANI u»«dhya Pradesh): Members of Parliament.

SHRI G. RAMACHANDRAN: Mr. Mani is answering for the Minister. Maybe some day Mr. Mani would be a Minister himself and he would answer it more authentically. But let me get on with the subject. I have carefully studied this report having given thirty years of my life to this subject of education, and having been, since independence, from among the tribe called the Gandhians, the one person who has co-operated up to the hilt with the Government in educational reconstruction. I have taken a deep interest in this report. In fact the Commission sent for me more than once and I ha'li very happy discussions with tbp ' ommission. I wruld like to divide che few things; I would like to say under the following heads:

The statement of objectives which the Commission has given; then what the Commission has done with basic education; then I would like to touch upon the language problem for a minute or two and finally my passionate hope that there would be implementation—I will come to that at the proper stage.

We have had this very distinguished Commission and in Dr. Kothari^ who was the Chairman of this Commission, we had a man the like of whom we could not have found for the Chairmanship of this Commission. A man with a great, open mind, I have never found him with a closed mind. I studied the objectives as stated in tht. Commission's report in different places and put up together, and so on. The statement of the objectives covers almost every single aspect conceivable of the subject. If I were tempted to use a poetic expression, we get a many-splendoured statement of the objectives. That makes me more and more afraid about implementation. I know something of implementations that have gone on or not gone on the Education Ministry but I would deal with it later. But for a Commission to be charged with framing the entire scheme of national education, it was too big a job for any Commission and even for this Commission. From pre-primary to the University was the vast area they have covered. It was too big a bite for any Commission however distinguished, and some /of the over-statements and understatements and some of the omissions and commissions are ail due to the fact that we have charged one Commission with the entire task of giving us a programme of total national education. There is perhaps nothing new in this Commission's report, I hope the writers of this report win forgive me for saying that, because there is hardly anything which is in this report which has not been said in other reports. We have had first-class reports on elementary education, on basic education, on secondary education, on university education and on innumerable other aspects of education.

AN HON. MEMBER: On technical education.

SHRI G. RAMACHANDRAN: Yes, on technical education also. What this Commission did was to put them together, to piece them together into a many-coloured mosaic, as I would like to call it. For this, great credit is due to this Commission, and for a long day to come I think the report of this Commission will hold the field as a classic on the subject of oniectivx- ' id methods. I am deeply concerned with what this report of the Commission has to say about

[Shri G. Ramachandran.]

Basic Education, and this is what the Report itself says:

> "We believe that the essential features of the scheme are fundamentally sound and that with necessary modifications these can form a part of education not only in the primary stage but at all stage in our national system. The essential principles of basic education are so important that they should guide and shape the educational system at all levels. This is the essence of our proposal and in view of this we are not in favour of deciding any one stage of education as basic education."

Could there be a more magnificent tribute to Basic Education than is contained in these excellent phrases? Basic education is not to be confined to the elementary stage as it originally was when Gandhi] i propounded basic education but the entire system of education in India is to become basic education. 'The principles are *to* permeate the entire system. Let me begin my comment on this paragraph by saying that I have known the phenomenon of damning a thing by faint praise but I have hardly come across the phenomenon of damning a thing by high praise like this. Not only elementary education, not only secondary education, but college education and university education should accept the essential principles of basic education. I am willing to challenge anybody on the floor of the House to tell me what are really the essential features of basic education. I have done this work for many years. I was Chairman of the Basic Education Assessment Committee which went round and gave a report to the Government of India. Somebody talked about public schools. I was privileged to be Chairman of another Committee which went round, saw public schools and gave a report to the Government of India. So I am not talking in the air. What is the core of basic education? Let Dr. Triguna Sen deny this let anybody deny this; the core is education in and through productive work. If this is not basic education, then nothing else is basic education. The Education Commission has said that the essential principles of Basic Education are so good that they must permeate the entire scheme of our education. But as you study the details of the Report, there is nothing of this kind in the proposals practically speaking. They have invented a new term 'work experience'. A couple of beautiful words 'work experience' instead of ' .vork-centred education.' The difference is fundamental. How is this work experience to be gained? They say that this work experience shall be gained in many places, not merely at the school, but in the factory, in the farm, in the home, wherever probably productive work is going on. We attempted something like this in what was called the Rajaji's scheme of education in the Madras State. I was then the Educational Adviser to the Madras Government and the responsibility for putting through what was called Rajaji's scheme of education I took up on my shoulders on behalf of Rajaji. We ran up against tremendous difficulties in giving work experience outside the School. In Basic Education it was laid down that work should be inside the school, productive work inside the school, as an integral part of the very education in the school. Now, work experience in the workshop, in a factory. In a farm, in a home where the craftsman is sitting, is simoly too much spread out. Tt is so delightfully vague that it can never become a realitv. And what is that time given to gain work experience? Two magnificent oeriods in a whole week. Can anvthing be a greater mockery of Basic education than this? There were two oeriods evprv dav in Basic education for productive work.

The second essential feature of basic education is to correlate work experience with learning. Now., correlation has gone almost totally overboard. I knew that it would go overboard. I talked to the members of the Commission on two occasions. -So here are the two most essential ieatures of productive woik-centred education, instead of book-centred • education. I tell you, the whole of the present scheme is bringing back education nearer to a book centred system than to a life-centred system or a productive work-centred system. "This is totally different from basic education. This is mis-directing basic education, misinterpreting basic edu cation and using fine phrases to cover misdirection. I have said this to some of the members of the Commission privately; I have said this at public meetings and at an Ail-India 'Conference on the subject, and the findings of this Conference havs been made available to the Ministry of Education. Just two periods a week ^for work experience, and work experience not inside the school, but spread over all kinds of places where work is going on. And in these two periods per week there is also social service, this, that and everything which could not be put into School work. I wish the Education Commission had said, we had looked into •the who'e thing, basic education is impossible for many reasons or anything like that. And sometimes, Dr. "Zakir Husain is auoted as having said that bask education has failed. 1 tell you that this is a lie spread •about him and about basic education. It was I who went to him for a message. It was he who gave that message to me when I was presiding over the All-India Basic Education Conference at Pachmarhi. What he said was. we have nearly lost basic education because we have not worked it sincerely, and rather than having this false basic education, let us story it, then some day the reality will come back again. That L> what he really said.

THE DEPUTY CHAIRMAN: Your time is up.

SHRI G. RAMACHANDRAN: I will hurry through in a few more minutes.

SHRI A. D. MANI: Let. him speak, there are many points.

SHRI G. RAMACHANDRAN: I will now leave my special subject of basic education. I only end with this challenge. I ask anybody on the floor of this House, anybody in the Government of India, to give me 20 to 30 people who are concerned with this matter but who have different opinions about basic education. If I can talk to them, explain to them, tell them what basic education is, I will get them to my side; all the 30 will vote for basic education. I have done this at International conferences. People from other countries have solidly voted for basic education. And yet we are now throwing it away in practice.

Now let me come to the language question for a moment. Ultimately, it seems that the situation is developing something like this—the mother tongue plus Hindi in some areas and the mother tongue plus English in some areas. This is the n ost dangerous thing that you can have. Ultimately what will happen is what is happening in Canada between English and French and what is happening in Belgium between the Flemish language and the French language. There will be two indias—a mother tongue plus English India and a mother tongue plus Hindi India. We shall be breaking up this nation once again. If you do not have the courage to ask people to learn Hindi compulsorily, then have the courage to ask the people to learn English compulsorily—one o^ the other. The Government is evading the issue. I

[Shri G. Ramachandran.]

am entirely with the Government and with the Minister that the medium of instruction must be the language of the people, the regional language from the bottom to the top. I do not think there is anybody who will differ from it except certain fanatics here and there. There is agreement on that. But if you develop all the languages of India to the utmost of their height and then add Hindi to some and English to some others, then you will be sowing the dragon's teeth in this country. Ycu should either have the courage to have one or the other. Maybe, net immediately. I am all for giving South India from where I come all the time we need. But tell them that the object is this, the conception is this; you will have to march in one direction for a link language. But if you do not have the courage to do so, you are leading the Nation to suicide in this country, intellectual and educational suicide. Some day there will be an English India and there will be a Hindi India. It will be fatal. Madam. I hope that will not be done. There must be a link language and even if you give all the time that South India wants, make it clear to South India, to my own part of India, to the Madras State, that they will have to come to Hindi some day, however much time they may take.

SHRIMATI YASHODA REDDY In the North there is . . .

SHRI G. RAMACHANDRAN: I will now have to leave out one or two things and I will come to implementation, and finish quickly, because I do not want to commit the error against which I protested only yesterday.

SHRI AKBAR ALI KHAN: We want to hear you.

SHRI G. RAMACHANDRAN: I must listen to the Chair.

DR. ANUP SINGH: Please give him more time.

SHRI G. RAMACHANDRAN: I want to say one word about Urdu. There is no language in this country which is so polished and so beautifully expressible as the Uidu language. I am still hearing in my ears the magnificent speeches of Maulana Abul Kalam Azad and the language he used. I am not suggesting that just because this is a very polished and a very good language, everything that is being asked about, it can be d<Dne. But when you are allowing; boys and girls of different languages to reach the highest level of university education through their mother tongues or through their regional languages, you must allow nearly two to three million Urdu-speaking people and their children to have the highest education in Urdu. Provide for that. How do you do that? Let us have a few universities—one in the North and one in the South at least—where education for the Urdu-speaking people will be available to the highest level in Urdu *as* is the case in regard to Malayalam or Telugu or Bengali. If this is not done, we shall be committing a grave error in this country.

And now finally a word or two about implementation and then I sit down. I know the Education Ministry well. I know many of the officers in the Education Ministry. They are valuable friends of mine. I have worked with them and I am proud of the kind of people we have in the Education Ministry. But I have also known this that things are not implemented. I can give you umpteen examples of schemes adumbrated but not put through. Multi-purpose schools—where are they today? Where is Rural higher education through Rural Institutes? Where is basic education? The Government of India and all the States had accepted basic education. It was never implemented"

properly. Several Directors of Public Instruction in the States torpedoed Basic education without the Government knowing what was really happening. Then in order to slow down the pace of the growth of full Basic education, which was considered to be very difficult, we were given an orientation programme turning all schools in the direction of Basic education. Many conferences vveife held and resolutions were passed. But orientation has also gone over-board altogether. Nothing has happened. Madam, Dr. Triguna Sen has the reputation of being a man of, shall I say, truthfulness. Maybe, ho is a man of steel, as somebody said to me. I hope it would be the steel of truthfulness. But if even one-tenth of things in the Commission's Report is implemented, I shall withdraw all my objections against this report and say, "God bless you". But it has to be done. You will not find the States easily coming with you. The States have their own ideas about education. When v/e had basic education at the Centre, some States said, "No basic education". When we wanted orientation, some States said, "No orientation". Therefore, will you be strong, clear-headed, persistent and enthusiastic enough to persuade the States to keep in step with you.

May I end by saying to the new Education Minister, for whom I have high regard, "Implement at least one-tenth of this Report and you shall live as an immortal in the history of «ducation of this country?"

श्रीमती पुष्पाबेन जनार्दनराय मेहता (गुजरात) : उपसभापति महोदया, मैं शिक्षा समिति की रिपोर्ट पर समीक्षा करने के लिये खड़ी हुई हूं । हम जानते हैं कि हमारी शिक्षा पद्धति और नीति कैसी है । आज कमीशन को धन्यवाद दे रही हूं कि उसने पहली बार शिक्षा के प्रबन्ध में प्री-प्राइमरी एजुकेशन को महत्व दिया है । जो कोठारी कमीशन की रिपोर्ट है उसमें भी उसका उल्लेख किया गया है । प्री-प्राइमरी एजुकेशन के लिये स्टेट की ओर से भी कुछ करना चाहिये और यह पालियामेंटरी कमेटी का भी उद्देश्य है कि कुछ करना चाहिये । मगर अभी तक हमने उसका सिर्फ उल्लेख किया है लेकिन किस तरह से क्या करना चाहिये इसके बारे में उनका कोई स्पष्टीकरण इसमें नहीं है । आज हमारी यह परिस्थिति है कि हमारे बालकों की शिक्षा का कोई निश्चित स्वरूप नहीं; कोई मोन्टेसरी के तरीके से पढ़ा देते हैं और कोई किंडरगार्टन तरीके से पढ़ाते हैं, अपनी अपनी अलग पद्धति से सिखाते हैं । आप जानती हैं कि हमारे यहां तीन अभ्यास कोर्स बच्चों के लिये चल रहे हैं और आई० सी० सी० डब्ल्यू० इतने बड़े कोर्स बनाये हैं कि मैं कभी-कभी सोचती हूं उनमें एक ग्रेजुएट भी पढ़ने के लिये जाय तो बड़ा कठिन मालूम हो । कहीं कहीं तो किसी एक स्टेट ने अपनी-अपनी स्कीम बना ली है और दूसरे किसी ब वोलेन्टरी तोर से बना लिया है । जो ये तीन प्रकार के काम हो रहे हैं इसका नतीजा यह होता है कि हमारे यहां बाल शिक्षा का कोई निश्चित स्वरूप नहीं रह गया है । मैं कहना चाहती हूं कि हमारे बच्चों की शिक्षा शुरू से ही अच्छी होनी चाहिये क्योंकि हमारे शिक्षा का जो प्रथम सोपान है वह भूलकर हम आगे जा रहे हैं और आज परिस्थिति यह है कि देहाती स्कूलों में भी जो छः साल के पहले बच्चों को पढ़ाते थे वह बन्द कर दिया है; आज छः साल के पहले हम कोई बच्चे को प्राइमरी स्कूलों में नहीं भेज सकते हैं और जो हमारी प्री-प्राइमरी स्कूल की शिक्षा की नीति है वह अभी तक गवर्नमेंट ने बनायी नहीं है । इसलिये मुश्किल यह है कि हमारे यहां बाल शिक्षा अच्छे ढंग से नहीं चल रही है ।

[श्रीमती पुष्पाबेन जनार्दनराव मेहता]

दूसरी बात यह है कि आज विभिन्न प्रान्तों में किसी स्टेट में टोकन ग्रान्ट देते हैं और कई जगहों में नहीं देते और सेन्ट्रल सोशल वेलफेयर बोर्ड के पास जो ग्रान्ट देने की रकम है उसमें से भी वह ग्रान्ट देते हैं और उनका कोई ऐसा तरीका नहीं है, ऐसी कोई नीति या नियम नहीं है कि जो निश्चित हो। इस लिये हमारी बाल शिक्षा सफर कर रही है, और मेरा यह सुझाव है कि जैसे प्राइमरी एजुकेशन हमारी स्टेट्यूटरी जिम्मेदारी है उसी तरह से प्री-प्राइमरी की भी होनी चाहिये। मुझे कभी-कभी जवाब मिलता है कि प्री-प्राइमरी की जिम्मेदारी लेने से स्टेट का बोझा बहुत बढ़ जायेगा मगर आज स्टेट भी और सेन्टर भी अलग अलग प्रदेश में प्री-प्राइमरी एजुकेशन के लिये कुछ न कुछ दे रही है और सब संस्थाओं को बुलाते हैं और कहते हैं कि बाल शिक्षा के लिये कुछ करो। राज्य और केन्द्रीय सरकार और प्लानिंग कमीशन ग्रान्ट देते हैं। यह रकम कम नहीं है तो राज्य क्यों न करें ? इस प्रकार से करने के कारण सब अपने अपने ढंग से कर रहे हैं । वह तरीका बन्द कर देना चाहिये । दूसरी बात यह है कि नेशनल लेवल पर ग्रामों के लिये और शहरों के लिये कार्य क्रम बना दिया जाय और ग्रान्ट देने का प्रबन्ध कर दिया जाय और जो ग्रान्ट सेन्ट्रल बोर्ड के हवाले पर है वह उनसे लेकर प्री-प्राइमरी एजुकेशन के लिये देना चाहिये क्योंकि स्टेट का यह प्रश्न है और स्टेट ही यह कर सकती है। इसलिये मैं सोचती हूं कि जब हम ने सब के लिये सोचा है, भाषा के लिये सोचा है, हमने क्या पढ़ना है इसके लिये सोचा है, किस तरह से प्राइमरी एजुकेशन हो सब बातों के बारे में सोच रहे हैं मगर हमारा जो बच्चा है, बालक है, वह बाहर खड़ा है, वह चिल्लाता है तो मैं आज ऐजूकेशन मिनिस्टर साहब से निवेदन करती हूं कि एक बच्चा बाहर खड़ा होकर चिल्लाता है, तो उसको गोद में बिठा लेना होगा और जो प्री-प्राइमरी एजुकेशन की जिम्मेदारी स्टेट ने अभी तक नहीं ली है उसको ले लेना चाहिये क्योंकि बच्चों की शिक्षा बचपन से ही सुधर सकती है। हमारे यहां बच्चों के मामले में देर की जाती है। सेन्ट्रल एजुकेशन मिनिस्ट्री ने अभी तक बच्चों को बाहर ही रखा है ।

प्राइमरी एजुकेशन के बारे में एक बड़ी बात यह भी है कि हमारी लड़कियां पढ़ नहीं पाती हैं क्योंकि उनके लिये कुछ ऐसी मुश्किलें होती हैं। मैं देहात की रहने वाली हूं, मुझे मालूम है वे कैसे देहातों में काम करती हैं। हमारे देहात की लड़कियां डोमेस्टिक काम में लगी रहती हैं, उनकी माएं उनको स्पेयर नहीं कर सकती हैं, दूसरी उनकी आर्थिक हालत इतनी खराब होती है कि हायर एजुकेशन के लिये लड़कियों को पढ़ाने का खर्च नहीं कर सकते हैं। उनके लिये स्टेट को कुछ स्कालरशिप देने चाहिये और उन के प्रोत्साहन के लिये जो देहात में लड़कियां हाई स्कूल पढ़ने के लिये आती हैं उनके लिये छात्रावास की सुविधा करनी चाहिये और लड़कियों को कुछ स्कालरशिप देकर उन को आगे बढ़ाने का प्रयत्न करना चाहिये।

हमारे देहातों में एक बड़ी मुश्किल यह है कि स्कूलों में पुरुष शिक्षक होते हैं और कोई स्त्री शिक्षक नहीं होती है इसलिये माता पिता कभी बच्चों को, लड़कियों को खास तौर से, स्कूल पढ़ने के लिये नहीं भेजते। पहले, दूसरे और तीसरे दरजे तक लड़कियां जा सकती हैं, इसके बाद जब वह बड़ी हो जाती हैं तो मां बाप चिंता करते हैं और उनको भेजते नहीं हैं। तो हर एक स्कूल में एक स्त्री और पुरुष का जब तक

प्रबन्ध नहीं होगा तब तक मैं सोचती हूं कि हमारी कन्याओं की शिक्षा सफर करेगी।

इसके अलावा एक बात यह है कि एक सुझाव वीकर सेक्शन के लिये रखा गया है, मगर आज जो रिजिडिटी हमारे डिपार्ट-मेन्टल वर्क में है और फाइनेन्स डिपार्ट-मेन्ट का एक जो कन्जरवेटिव मानस है उसके कारण आज जो वीकर सेक्शन बोलते हैं, पिछड़े हुये दूर दूर के प्रदेश हैं, उनके वास्ते जो ग्रान्ट्स हैं उनको मिलने में बड़ी मुश्किलें होती हैं। इसलिये मेरी प्रार्थना है कि कुछ न कुछ ऐसी सुविधा देनी चाहिये कि जो बहुत पढ़े लिखे नहीं हैं, जो फाइनेन्स डिपार्टमेंट के ढांचे में नहीं आ सकते हैं, उन को कुछ सुविधा मिल सके।

बैकवर्ड क्लासेज के लिये स्पेशल फीचर्स के बारे में भी कहा जाता है। मैं स्कूल्स चलाती हूं और मुझे मालूम है कि हर साल छः महीने तक तो हमारे शिक्षकों के वास्ते पगार की ग्रान्ट मुझे नहीं मिलती है क्योंकि हमारी स्टेट के एड्वान्स्ड एरिया के साथ उनको समझा जाता है; पूछा जाता है कि इधर यह क्यों है उधर वह क्यों है ? इसलिये जो प्रोत्साहन देना चाहिये वह नहीं मिलता है। तो रिपोर्ट में जो लिखा हुआ है वह कहां तक सही है यह सोचने की बात है। जब हमारे आफिसर्स के पास वह चीज जाती है तो वे अपनी बात करते हैं, वे कुछ सोचते नहीं, समझते नहीं। अपने पगार की तो न मालूम उनको कितनी चिंता होती है मगर जो हमारे देहात में बैठे हैं, जंगल में बैठे हैं उनकी तन्ख्वाह तीन-तीन चार-चार महीने तक जो नहीं मिलती है इसकी कोई चिंता उन्हें नहीं है।

हमारी स्त्री शिक्षा का प्रश्न बड़ा गहन है। आप जानते हैं कि हमारे ट्रेनिंग कालिज में जो आते हैं, न हम उनके काम देखते हैं, न उनकी योग्यता देखते हैं किन्तु कितने पर-सेन्ट मार्कस आये हैं, वह देखते हैं। वह कितना काम कर सकेगी या काम के तौर से काम करेगी यह नहीं देखते हैं।

लेकिन आज क्या हो रहा है ? इतने ट्रेनिंग स्कूल होने के बाद भी क्या वहां पर लड़कियां ठीक तौर से उसका लाभ उठा रही है? मगर जब नौकरी करने की बात आती है, जब देहातों में जाकर काम करने की बात आती है, तो माता पिता के सामने उनकी लग्न करने की बात आ जाती है और उनकी शादी करने की उनको चिन्ता हो जाती है। इस तरह से लड़कियों का देहात में जाकर काम करना मुश्किल हो जाता है। इसलिये मेरा सुझाव है कि जो विधवा औरतें हैं, जो अपना जीवन इस तरह से कार्यों में लगाने के लिये तयार है, इस समय काम कर रही हैं, उन्हें 4, 8 या 10 प्रतिशत मार्क्स में कमी दी जानी चाहिये। हमने इस संबंध में गुजरात सरकार को एक प्रस्ताव दिया था जिसको उसने स्वीकार कर लिया और इस तरह से मार्क्स में 5 प्रतिशत की कमी उनके लिये कर दी है। तो मैं सोचती हूं कि इस तरह की बहुत सी बहिनें हैं, जो जीवन पर्यन्त काम करने वाली हैं, उन्हें काम करने के लिये मौका दिया जाना चाहिये। इसके उपरांत शिष्य-वृत्ति भी दे दी जाय।

तीसरी बात मैं टीचर्स के बारे में कहना चाहती हूं। मैं इस बात से बहुत सहमत हूं और मैं जानती हूं कि उनका स्टेटस जितना हम बढ़ायेंगे उतना उनसे हम अच्छा और ज्यादा काम ले सकेंगे और इससे शिक्षा में प्रकाश आने वाला है। मगर मैं एक बात से सहमत नहीं हो सकती हूं और वह यह है कि इलैक्शन में

[श्रीमती पुष्पाबेन जनार्दनराय मेहता]

देश के टीचर्स हिस्सा ले सकें जैसा कि इस रिपोर्ट में कहा गया है। मैं समझती हूं कि पोलिटिशियनों ने इस कमेटी में इस बारे में विचार किया और इसीलिये उन्होंने टीचर्स को इलैक्शन में हिस्सा लेने की छूट दे दी है। मगर मैं यह बात अच्छी तरह से जानती हूं कि देहातों में जो टीचर्स पंचायतों की पोलिटिक्स में पड़ जाते हैं, वे फिर स्कूल नहीं जाते हैं। वे पंचायतों के झगड़ों में ही फंस जाते हैं और कभी कोई बात कहते हैं और कभी कोई बात कहते हैं। इसलिये मेरा नम्र सुझाव है कि टीचर्स को सब काम करने की तो इजाजत दे देनी चाहिये मगर इलेक्शन से उन्हें दूर रखा जाना चाहिये।

एडल्ट एजूकेशन के संबंध में मेरा खास तौर पर सुझाव है है। आज हमारे यहां एडल्ट एजूकेशन के बारे में कोई खास स्वरूप नहीं है। वह इस तरह से दे दिया जाता है जिससे हमारी स्त्रियों को मुश्किल होती हैं। जो स्त्रियां पढ़ने को तैयार होती हैं उन्हें कोई पढ़ाने वाला नहीं होता है और कभी कभी तो इम्तहान देने में भी मुश्किल हो जाती है। तो मेरी प्रार्थना है कि इस ओर भी हमारा खास प्रयत्न होना चाहिये। उन्हें इस तरह की शिक्षा दी जानी चाहिये ताकि वे अपने जीवन में उस शिक्षा से कुछ न कुछ कर सकें। हमारी जो वीमन्स कमेटी की रिपोर्ट है, उसमें बतलाया गया है कि 14 साल की लड़कियां जो स्कूल नहीं जाती है, वे एडल्ट एजूकेशन में नहीं आती हैं। 14 से ऊपर और 17 साल के बाद की लड़कियां आती हैं। जिन लड़कियों की शादी नहीं हुई हो और जो लड़कियां अपने ससुराल नहीं गई हों, ऐसी लड़कियों की खास शिक्षा का प्रबन्ध होना चाहिये। आप जहां देहातों में स्त्री शिक्षा का प्रबन्ध नहीं कर सके हैं और यहां तक स्त्रियों की

ा काम पूरा होने वाला है, उसके संबंध में मैं यह कहना चाहती हूं कि ट्रेनिंग के बारे में कुछ काम किया जाना चाहिये। मगर आज हमारे सामने यह प्रश्न है कि जो सोशल वेलफेयर के प्रोजेक्ट हैं जो स्त्रियां का [illegible] हैं उनको निकालने की बात हो ही है उनको रिओरियन्टेशन और इस तरह की ट्रेनिंग देकर हमें स्त्रियों को काम पर लगा रखना चाहिये। लेकिन मैंने कल ही अखबार में पढ़ा कि यू० पी० में 500 औरतें जो पहले काम में लगी हुई थीं उन्हें छुट्टी दे दी गई है। जब हम स्त्री शिक्षा के संबंध में इतना प्रसार कर रहे हैं, इतना कमिटमेंट कर रहे हैं तो फिर उन्हें इस तरह से नहीं निकाला जाना चाहिये। मैं सोचती हूं कि हमारे देहातों में जो स्त्रियां काम करने वाली हैं, जो असल में वहां पर अच्छी तरह से काम कर सकती हैं, उन्हें काम दिया जाना चाहिये।

(Time bell rings.)

इसके अलावा बहुत से पोआइन्ट थे, लेकिन घंटी बज गई है, मैं उनको नहीं कह सकती हूं। मैं शिक्षा मंत्री जी से प्रार्थना करना चाहती हूं कि स्त्री शिक्षा और बच्चों के संबंध में जो काम हैं, उसका विशेष तौर पर ख्याल रखा जाना चाहिये। मैंने जो सुझाव दिये हैं उन पर अच्छी तरह से विचार करके कार्यान्वित करने की कोशिश की जानी चाहिये।

SHRI R. T. PARTHASARATHY (Madras): Btafcam Deputy Chairman, I rise to pay my tribute to the Education Commission for the monumental report that it has given to the country, and at the same time I would only pay a half hearted tribute to the report of the Parliamentary Committee on Education that is before us to-day. I would like to cut across the Party barriers that

exist in this House and pay a compliment to Prof. Ruthnaswamy's speech which I would describe as words of wisdom that emanated from a great educationist. 1 am sure that ii this House would take the sagacious advice of eminent educationist like Prof. Ruthnaswamy, Dr. Kothari, Dr. Lakshmanaswami Mu^aliar and may 1 also add, Dr. Trig *a Sen, we shall be able to solve <*ui* our educational problems in a spirit of amity and usefulness and progressive thinking. The learned Education Minister, in his opening speech two days ago, said that the Education Commission Report that is before the House has set before us a Himalayan task. I am sure the Education Minister himself will not commit a Himalayan blunder in trying to tackle this Himalayan task that is before the country. Why am I saying this? I have studied the Report of the Commission as well as the Report of the Parliamentary Committee very deeply and I am constrained to think that the neighbourhood school system is very wrong, is illegal and unconstitutional. I am not for the public schools as such. I am one of those who ire definitely opposed to the public school system because it creates a class by itself, a class, if I may say so, that even ^oes to the extent of developing an anti-Indian feeling and a pro-Western feeling. But this neighbourhood school system, in the long run, I am sure, will bring about regimentation. And if there should be regimentation in education, we shall be setting at naught the liberty Of thought and the liberty which every citizen enjoys to send his child to the school *of* his choice. That is an inherent right of a parent which has been recognised not only under Article 26(3) of the Human Rights Charter of the United Nations, but also in the principles of the Constitution of India. My learned friend, Mr. Chengalvaroyan, argued vehemently yesterday, quoting from Justice Chagla's Judgment, that the neighbourhood school system will not come under the purview of that judgment. But I am afraid, being a lawyer myself, that in the long run if you will try that, it will certainly go against the tenets of our Constitution and I would not 'ie sorry if the Supreme Court of I'idia would declare that this neighbourhood school svstem is ultra *vires* Of the Constitution. I would appeal to the Education Minister to give thought to this question before finalising this in the actual Bill that will come before the Parliament. I would respectfully request him in the interest of justice, in the interest of respect for human rights and in the interest of our own Constitution and liberty of thought, he should not force this neighbourhood school system upon us.

The second question is a complex question, namely, the language i=sue, which is madr more complex b- ".he protagonists of Hindi. I would at once say that Hindi chauvinism and blanket imposition of Hindi will destroy the ultimate unity and integrity of India. I am a pro-Hindi man with reference to the implementation of Hindi as the official language, but not to-day; it shall be only 30 or 40 years later. This country is not prepared to accept in the present stage that Hindi can alone be the *Ungua franca* of India. What is it that has brought about our country's unity? It is the educated class as such, besides the various religions, that has brought about the unity of the country and has strengthened the ties between the North and the South, between the East and the West. That cannot be rebutted by the learned Education Minister but I would respectfully ask him: "Is it not the Hindi chauvinists who would promote the importance, whose overnight love for the development of the regional languages for the University education has come about, and who in that love—they do not want ultimately to promote the regional languages but—1 would very vespeetruliy »t*y

[.Shri R. T: Parthasarathy] that by destroying English they want to predominate and they will domi-note the entire country's administration as a whole?" I am sorry to speak in this strain but I am making a point out of it that you must listen to the South, you must listen to Bengal, you must listen to those who come from the non-Hindi areas and understand what their feelings are. As I said, I am not opposed to Hindi, but I very much question the wisdom of this Committee when it says that in 5 years they will be able to switch over to the regional languages. May I ask very respectfully Dr. Sen whether Bengal is ready to take up, at the university level, education in Bengali? The D.M.K. Government of Madras say that they are going to implement the regional language system. Prof. Sher Singh yesterday said that Rs. 18 crores are set apart for translation of the various works, Rs. 1 crore for each language. I have myself studied this matter deeply and I would challenge any-one even the Education Minister, whether in a period of ona year or 5 years or even 10 years the entire works in the various languages could be translated into the various regional languages, of the various public libraries of India and the libraries of the Universities of India? Where are we heading to-day? Why should there be so much of hurry? Hurried thinking will always destroy the foundation of our education. I ask Dr. Sen whether he is going to publish this report of the Parliamentary Committee and the decision that the Government would take and circulate *for* public opinion throughout the length and breadth of India before taking a final decision and putting it before the Parliament? I would very much like to get the answer from the Education Minister. If we should take a census of the entire educated classes of India and even u census of the graduates and under-graduates, T am sure, not even 5 per cent, would vote in favour of the regional languages immediately. We shall have to wait for a period of 30 years, the Hindi-protagonists Will have to wait for 30 years, so that the whole country, all the regions, could be made to uplifc themselves in their particular regional language, Hindi or whatever it may be. I would even go to the extent of requesting Dr. Sen if he would bring an amendment to the Constitution, if he is really sincere about it and I will vote for it that education shall be a Central subject or at the least, education shall become a Concurrent Subject. If education shall become a Concurrent Subject, he will be able to succeed to a very large extent. I would like to invite your kind attention and through you, the attention of the House that on 16th July, the present Madras Chief Minister made a speech in Salem and said:

> "Why should there be an Education Minister for India, why should there be a Health Minister for India, when these two subjects are State subjects? What right have they to interfere?"

May I ask the Education Minister how he is going to formulate a national policy of education and how he is going to implement that in the Madras State? How is he going to apply any sanction against the Madras Government if he is not going to get the support and cooperation of the Madras Government and he has not the power under the Constitution to interfere with the educational administration of Madras? There must be some loud thinking on this and as I said, dis-passionate thinking, a balanced judgment and what I would call the broadside of the whole picture should be considered.

I would conclude with a word by supporting every word of Prof. Ruth-

naswamy in saying that we shall formulate a national policy if there is a nation but this regionalism, by the present outlook of the Parliamentary Committee's report, we are creating what I would call, the balkanisation of India. Mr. Ramachandran said that it would be an English India and a Hindi India. I go a step further to say that it will be fourteen Indias which will be ultimately working for their own welfare and for their own independence and there will be nothing to call us a nation and I am afraid this is not the way in which we have been brought up. This is not the way for which we have worked and attained the Swaraj of our country and I am sure if this educational policy is going to be worked out without any compromise, without a broad thinking and taking the nation as a whole, particularly the non-Hindi-speaking people, I am afraid we are committing Harakiri and I hope that Dr. Sen, who is himself an educational expert and truly a great patriot, will not work up our way towards Harakiri.

SHRIMATI USHA BARTHAKUR (Assam): Madam.

DR. TRIGUNA SEN: May I say one word?

[THE VICE CHAIRMAN (SHRI AKBAR ALI KHAN) in the Chair.]

DR. TRIGUNA SEN: My young friend, the hon. Member *here, perhaps made ,1 mistake. It is not my fad to introduce regional languages as the media of instruction. It is the Education Ministers of all the States, including Madras, who met here who decided unanimously that the regional languages should be the media of instruction at all stages. It is not my fad.

SHRI GANGA SHARAN SINHA: Perhaps they decided about the period also.

SHRIMATI USHA BARTHAKUR: I am grateful to you that at last you have given me some time for saying a few words in this discussion As the time is very limited, I want to touch only 3 or 4 points in this discussion. Regarding the language problem, I do not want to speak much more. In substance I want to say that while it is ideal that the Indain languages should be the media of instruction at all stages of education, I venture to submit that the time-limit of five years as suggested for the change-over, is rather too unrealistic and impractical. Secondly, I believe that the faculties of medicine, agriculture, engineering and postgraduate education in science subjects should continue to be taught in English, till Hindi adequately develops to replace English and the question of introducing the regional languages as media should await development in their respective fields on these subjects. So I consider it to be unwise to make any undue haste in such a vital matter without making the necessary or adequate preparations to bring about the changes without creating difficulties.

I congratulate the Education Commission for their appreciation in the report that for full development of our human resources, the improvement of homes and for moulding the character of children during the most impressionable years of infancy, the education of women is of greater importance than that of men. One great man also said that an educated mother is superior to hundred school teachers. But what do we find in reality? The education of women in our country has been given a secondary importance and the gap, in the level of education of our boys and girls is far wide. The report of the Education Commission points out that in the primary stages, the girl students were 55 against 100 boys while in the University stage the number has been as low as 24 against 100 boys even in the year 1965-66. The Commission has recommended that special programmes for education of girls at all stages and in

[Shrimoti Usha Barthakur]

all sectors should be taken up as an integral part of the general programmes for the expansion and improvement of education. I strongly urge that the Government should take immediate steps for the implementation of the recommendations of the Commission to remove the backlog in the education of women.

Sir, in this connection I would like to emphasise me following points in the matter of improving female education.

Firstly, education of girls should be made free up to the higher secondary stage and special scholarships should be awarded to girls of economically backward families of all classes up to the university stage. It hag been seen from past experience that given opportunities our girls cannot only compete with boys in all fields of itcademic pursuit but can also surpass boys. Even on merit the education of gills should be given adequate fillip and encouragement.

Secondly, Sir, adequate provision should be made for establishing colleges for girls so as to enable the girls of poorer means to have the facilities for higher education. Along with colleges it is of equal importance thcit we provide for adequate hostel facilities for girls hailing from rural areas. It is seen that nowadays the girls of rural areas are more enthusiastic to have their education. As a lifelong active participant in female edmcation, I know what a great handicap it has been in the matter of education of girls especially in the rural areas not to have hostel accommodation. Unless we remove this handicap, female education will lag behind in spite of our best and pious wishes. 1 must say that for"the above reasons even today Assam is lagging behind in female education. Sir, I would suggest that the Centre should take full financial responsibility for providing hostels and other facilities for girls jn all stages of education from the school to the university.

Thirdly, Sir, apart from general education specal facilities should be piovided for girls in vocational and professional fields as, for instance, •medical, health and family planning, a&riculture, industry, commerce and engineering, polytechnic, arts, crafts etc. We have seen that our women also fought side by side with men in times of emergency. In normal times also they can work side by side with mm. Women are about half of our total population. Thus this huge manpower should be fully utilised by giving it proper education and training *(Time bell rings.)* Am I to end now?

THE VICE-CHAIRMAN (SHRI AKBAR ALI KHAN): No, eight minutes are over and you have only two more minutes.

SHRIMATI USHA BARTHAKUR: I would need some time more because it is an important subject.

THE VICE-CHAIRMAN (SHRI AKBAR ALI KHAN): Ybu have two more minutes. Hereafter everyone will have ten minutes only.

SHRIMATI USHA BARTHAKUR: I don't know what to discuss in such a short time. Another thing that I wanted to refer to is the education of handicapped children. This has been dismally neglected so far and I am glad to find that the Commission has taken note of this question and has rightly observed:

> "The constitutional directive on compulsory education included handicapped children as well, and very little has been done in this field".

In another place the Commission opines:

> "It is essential that the education of handicapped children should be

an inseparable part of the general educational system".

This view will, no doubt, be supported by an

Sir, from the Report of the Com-nussu.i we find that the number of the handicapped cnildrenis 2.5 millions in the whole country of whuch the number of blind children of school-going age is about 3 lakhs and that of the deaf children is about 4 lakhs. The Report further poir.ts out that out of a hundred only one blind or deaf child can have the chance to have education up to the primary stage. There is no government school for the blind or deaf in the whole country. Sir, this is really unfortunate, to say the least. Apart from humanitarian considerations it has now been proved that given proper facilities these handicapped children can become useful citizens and may even compete with normal boys and girls. Sir, I feel proud to be able to cite the living example of my own home district where there has been established since 1950 a school for the blind under the management of the Sreemanta Sankar Mission, a voluntary organisation which has been doing humanitarian service in various fields in our State, both in the plains and in the hills. The pupils of this school which is the only one in the whole of the eastern region, have competed with normal students and have successfully passed examinations up to the B.A. with credit. In music also they have excelled in open competitions. They learnt useful handicrafts and have utarted earning their livelihood. Similar must be the experience of the institutions in other States, no doubt. This experience should, therefore, open our mind and dispel our nreiudices against (he handicapped children who should no longer be treated as social liability but as good and as useful as all others.

Sir. the main handicap in the matt?'-of education of these unfortunate chil-dren is the apathy of the Government and the consequent paucity of funds. It is true that Government have been giving occasional grants but these are very 'meagre compared to the need. Unless Government makes adequate provision in the Budget for giving recurring grants to meet the expenses of running the institutions which are catering for the education of the handicapped children, it will be impossible to run them merely on charities which have also been rapidly going down due to the economic depression in the country. Besides this, the education of the handicapped children is "more expensive than that of general children because it entails Special equipments and other accessories and special facilities Sir, I, therefore, strongly urge that this matter should be given earnest attention by the Government and with- a sense of urgency,

THE VICE-CHAIRMAN (SHRI AKBAR ALI KHAN): That will do, thank you.

SHRIMATI USHA BARTHAKUR: Just one sentence more, Sir. I am happy *to* find that the Education Commission has suggested in this Report;

"There should be at least ona school in every district in the States for the handicapped children and there should be coordinated effort ill different government agencies in th* field for this purpose."

Sir, I heartily endorse this recommendation and request the Government to implement it without delay.

Lastly I appeal, sir, to this hon. House and to the Government to consider the question of the handicapped children with sympathy, from a Humanitarian point of view as well as from the point of veiw of social justice and to take a firm decision in order to remove this stigma. Sir, it is rather painful to find that although we have a Social Welfare Department

[Shrimati Usha Barthakur]

it pleads helplessness when we approach it for funds for the education (if these unfortunate children, due to Jack of budgetary provision. I hope "this situation will not be allowed to remain unsolved. Thank you, Sir.

• 6 P.M.

श्री जगत नारायण : वाइसचेयरमेंन महोदय, शिक्षा मंत्री जी ने जो दो बड़ी योग्यतापूर्ण रिपोर्ट पेश की हैं उसके लिये मैं उनको बधाई देता हूं। यूं तो इससे पहले भी बहुत योग्यतापूर्ण रिपोर्ट छपी हैं लेकिन मैं उनको इस बात की बधाई देता हूं कि उन्होंने एक क़ौमी नुक्तेनिगाह से अब शिक्षा के मामले को सोचना शुरू किया है कि किस तरह से शिक्षा पद्धति हो और सारी बातें हों।

1952 ई० में जब सच्चर साहब की वजारत बनी तो मैं भी वजीर बना और मैं शिक्षा मंत्री बतौर कैजुअल्टी के बना, कैजुअली क्यों, इसलिये कि शिक्षा का मुहकमा कोई लेने को तैयार नहीं था क्योंकि सिर्फ 1 करोड़ रुपये का खर्चा उसके लिये मिलता था, कोई मिनि- स्टर उसे लेने को तैयार नहीं था। तो सच्चर साहब ने मुझे कहा कि तुम ले लो, तो मैं चार साल तक शिक्षा मंत्री रहा। मैं कोई एजुकेशनिस्ट नहीं हूं, यहां पर बड़े, बड़े एजुकेशनिस्ट की तकरीरें आज हुई है और बहुत कुछ बातें आपके सामने रखी गई हैं, मैं सिर्फ दो तीन सुझाव आपके सामने रखना चाहता हूं क्योंकि आपने बड़ा शार्ट टाइम दिया है। मैं दो तीन बातें सामने रखूंगा जिन्हें बतौर शिक्षा मंत्री के महसूस किया है।

सब से पहले मैं यह बात रखना चाहता हूं कि जो प्राइमरी एजुकेशन का सिल- सिला है इस पर आपको पूरा ध्यान देना चाहिये। यह असल है, बेसिक चीज है, जिसके कि आप इस हिन्दुस्तान की बुनियाद रखेंगे। आज कल क्या हो रहा है कि एक टीचर स्कूल है और एक टीचर चारचार क्लासेज को पढ़ाता है। जब एक टीचर स्कूल है या दो टीचर स्कूल है और वह चार चार क्लासेज के लिये हैं तो आप बताइये कि क्या एजुकेशन हो सकती है। तो मैं बड़े अदब से अर्ज करूंगा कि प्राइमरी एजुकेशन की तरफ आपको बड़ी तवज्जह देनी चाहिये। किस ढंग से देनी चाहिये ? जिस ढंग से कि मिशनरी स्कूलों में दी जाती है। आज यों वन परसेंट लोग भी पबलिक स्कूलों में और मिशनरी स्कूलों में नहीं जाते हैं जिसका बड़ा चर्चा किया गया क्योंकि लोगों के पास पैसा नहीं है, लोग उसका खर्चा नहीं दे सकते, मगर उनका जो तालीम का तरीका है वह इतना अच्छा है कि क्या कहना है। वह बच्चों को तमाम चीजें सिखाते हैं बैठना सिखाते हैं, नमस्ते करना सिखाते हैं, जयहिन्द करना सिखाते हैं तमाम चीजें इस ढंग से सिखाते हैं कि बच्चों को कुछ तरबियत हासिल हो। जो हमारे प्राइमरी स्कूल हैं उनमें उन्हीं स्कूलों की तरह बच्चों को तालीम दें तो आपको उन स्कूलों में अट्रेक्शन भी होगा, बच्चे भी आयेंगे और यह जो लांछन लगाया जा रहा है कि अमीर लोग अपने बच्चों को भेजते नही है, पबलिक स्कूलों में भेजते हैं, यह भी खत्म हो जायगा। जो पबलिक स्कूलों में पढ़ते है वह वन परसेंट से भी कम है। मैंने अपने वक्त में तो इनका रिकगनिशन बन्द कर दिया था और मैंने कहा था कि आगे पबलिक स्कूलों को रिकगनिशन नही देंगे ताकि बच्चे प्राइमरी स्कूलों में अच्छी तरह से पढ़ सकें। तो मैं बड़े अदब से अर्ज करूंगा कि प्राइमरी स्कूल की पढ़ाई को बदलने का यत्न करें और यह तब बदला जा सकता है जब कि प्राइमरी स्कूल में बी० ए० बी० टी०

ही टीचर हों, जो लड़के या लड़की बी० ए० बी० टी० टीचर हैं उनको ही लिया जाय । ये जो पबलिक स्कूल हैं इनमें बी० ए० बी० टी० टीचर पहली जमात से पढ़ाते हैं ।

श्री चित्त बासु : उनको तनख्वाह भी ज्यादा मिलती है ।

श्री जगत नारायण : जब मैं बी० ए० बी० टी० टीचर कह रहा हूं तो बी० ए० बी० टी० को पैसा भी उतना ही देना पड़ेगा, 330 रु० या 320 रु० जो आज गवर्नमेंट ने कर दिया है वह अच्छी बात है और वह देना पड़ेगा । बी० ए० बी० टी० पहली क्लास को पढ़ायें और तर्बियत सिखायें। मैं बैंकाक में गया था उनको पता चला कि मैं शिक्षा मंत्री रहा हूं तो वह स्कूल को विजिट कराने के लिये ले गये । मैं देख कर हैरान हो गया। तमाम बच्चों की एक ड्रेस थी और जब बच्चा स्कूल आता था तो वहां एक टीचर खड़ा होता था और अपना सामान ले कर उस टीचर को सलाम करता था, झुकता था, सलाम करने और झुकने के बाद ही वह बच्चा स्कूल में जा सकता था और जब स्कूल में जाता था तो जो उनके देश का ऐंथम है वह उसको पढ़ाते थे, उससे झंडा लहराते थे और चूंकि वहां बुद्धिस्ट रिलिजन है तो वहां के हेडमास्टर या टीचर आधाघंटे तक बुद्धिज्म का उपदेश करते थे । तो जब तक आप अपने बच्चों की तालीम में यह बातें नहीं लायेंगे, जो धार्मिक चीजें हैं वह उनको पढ़ने नहीं देंगे, धार्मिक शिक्षा नहीं देंगे तब तक मैं समझता हूं कि आपका काम चलेगा नहीं, आप जितनी भी बातें कर लें लेकिन आप अच्छे सिटीजेंस पैदा नहीं कर सकेंगे, अच्छे भारतीय नहीं पैदा कर सकेंगे और जो एक नेशनल कौमी नुक्तेनिगाह लेना चाहते हैं वह नहीं कर सकेंगे जब तक कि आप प्राइमरी एजुकेशन की तरफ पूरी तवज्जह नहीं देंगे ।

श्री नेकीराम (हरियाणा) : जब आप वहां शिक्षा मंत्री थे तो आपने कितने धार्मिक स्कूल खोले ?

श्री जगत नारायण : मैं धार्मिक स्कूल तो खोल नहीं सका ।

दूसरी बात मैं कहना चाहता हूं कि आज जो भाषा का मामला है यह बड़ी आसानी से हल हो सकता है । हमारे पंजाब में हिन्दी और पंजाबी का झगड़ा था, दो भाषी सूबा था उस वक्त, अब तो हिस्सों में बंट गया, हरियाणा हो गया, और हिमाचल में कुछ इलाका चला गया लेकिन उस वक्त सारा पंजाब सूबा था, दो भाषी सूबा था, उस वक्त एजिटेशन चल रहा था, मैं शिक्षा मंत्री था तो पंडित जी ने मुझको बुलाया और पूछा कि क्या किया जाय , तो मैं ने कहा कि आप मेरी बात मान लें , मैं सिख लीडरों को मिल चुका हूं, उन्होंने एग्री कर लिया है इस बात को, आप हिन्दी और पंजाबी को पहली जमात से लाज़मी कर दें पढ़ाने के लिये तो फिर न बटवारा करना पड़ेगा और न इतना शोर शराबा जो हो रहा है वह होगा, तो पंडित जी कहने लगे कि दो जाबनों का बोझा बच्चे बर्दाश्त कर सकेंगे, तो हमने कहा कि कि जो पब्लिक स्कूल हैं, हमें लाहौर हमे मे जो सैक्रेड हार्ट स्कूल था उसका मालूम है, वहां पहली जमात में अंग्रेजी पढ़ाते थे, , उर्दू पढ़ाते थे, तीन लैंगुएज पढ़ाते थे, ये जितने पब्लिक स्कूल हैं, माडल स्कूल है, वह अंग्रेजी पढ़ाते हैं , हिन्दी पढ़ाते हैं और पंजाबी पढ़ाते हैं हैं तो दो लैंगुएज पढ़ा सकते हैं, अगर दो लैंगुएज को पढ़ाने का पहली जमात से इंतजाम कर दें तो सारी समस्या हल हो जाय । भारत वर्ष में

[श्री जगत नारायण]

जो लिंक लैंगुएज का झगड़ा चल रहा है और यह जो हिन्दी को राष्ट्रभाषा नहीं माना जा रहा है, वह इस तरह हल हो जायगा। आप तमाम सूबे के लोगों को, एजुकेशन मिनिस्टर्स को कहें कि वह पहली जमात से नहीं तो दूसरी जमात से और दूसरी जमात से नहीं तो तीसरी जमात से हिन्दी कम्पलसरिली पढ़ाना शुरू कर दें, बाकी चीजें हिन्दी में न पढ़ायें, सारी पढ़ाई रीजनल लैंगुएज में हो, मैं इसके हक में हूं, जो आपकी रिकमंडेशन है, उसके माफिक मैं हूं, लेकिन मैं समझता हूं कि जब तक हिन्दी को कम्पलसरी सबजेक्ट नहीं बनायेंगे तब तक एक राष्ट्रभाषा की शक्ल यह नहीं ले सकती है और न लिंक लैंगुएज बन सकती है। मद्रास के लोगों ने कहा कि जल्दी नहीं कीजिये, मैं जल्दी के हक में नहीं हूं, लेकिन सिर्फ यह कि हिन्दी को एक कम्पलसरी सबजेक्ट बनादें, उस के लिये चाहे एक पीरियड ही रोज रखें मगर हर स्कूल में यह कर दें। जो यह कहते हैं कि बच्चों के दिमाग पर बड़ा बोझ पड़ेगा वह बात नहीं है। जो अमीरों के बच्चे पबलिक स्कूल में जाते हैं वह भी तो दो दो और तीन तीन जबानें पहली जमात में पढ़ते हैं। मेरी एक लड़की है वह जालंधर में मिलिटरी स्कूल में है, एक बच्ची वहां पढ़ती है, बाकी जितने बच्चे और पोती पोते हैं वगैरह हैं, वह गवर्नमेंट के स्कूलों में हैं लेकिन वह वहां पढ़ती है तो वह अंग्रेजी भी पढ़ रही है और हिन्दी भी साथ साथ पढ़ रही है। पहली जमात में से और दोनों ही लैंगुएज में बहुत ठीक तरह से चल रही है। तो जब अपने बच्चों को पबलिक स्कूल में हम दो लैंगुएज पढ़ा सकते हैं तो फिर अपने गवर्नमेंट के प्राइमरी स्कूलों में क्यों नहीं पढ़ा सकते। मैं चाहूंगा कि आप इसके मुताल्लिक भी सोचें और सोच कर के इसको लागू करवा सकें तो यह जो लिंक लैंगुएज का मसला है, राष्ट्रभाषा का मसला है, हिन्दी का मसला है, यह बिल्कुल आसानी से हल हो सकता है, बगैर किसी तनातनी के यह हल हो सकता है।

अब एक तीसरा सुझाव मैं आपके सामने रखना चाहता हूं और वह यह है कि आपको सिर्फ हायर एजुकेशन का ही ध्यान नहीं रखना चाहिये। आप युनिवर्सिटीज को बहुत पैसा देते हैं, जो वहां केन्द्र प्रोफेसर्स हैं उनकी तनख्वाहें बढ़ी हैं मगर जब तक आप प्राइमरी स्कूल और मिडिल स्कूल और हाई स्कूल के जो टीचर्स हैं इनको पूरा तनख्वाह नहीं देंगे, इनकी तनख्वाह नहीं बढ़ायेंगे तो जो आपका असली मकसद है कि बच्चों को कौम का बनाने वाला बनायें वह शायद नहीं होगा। क्यों नहीं होगा, इसलिये कि आज हालत यह है कि जो मिडिल क्लास के लोग हैं उनको अपने बच्चों के लिये उस्ताद रखना पड़ता है, घर में ट्युशन रखना पड़ता है। अब तो ट्युशन का एक नया सिलसिला चल रहा है। मैं एजुकेशन मिनिस्टर था तो मैंने कहा था कि एक उस्ताद एक ट्युशन ले सकता है इससे ज्यादा नहीं ले सकता है और मेरा ख्याल था कि मैं इसको बिल्कुल बन्द कर दूंगा। मैं समझता हूं कि यह जो ट्युशन का सिलसिला है इस को बिल्कुल बन्द होना चाहिये। और यह तभी बन्द हो सकता है जब कि उस्तादों को आप पूरा पैसा दें ताकि वह पूरा वक्त बच्चों की तालीम के लिये दें।

(Time bell rings)

बस मैं दो मिनट में खत्म कर दूंगा। मुझे बड़ी खुशी हासिल हुई कि आपने संस्कृत के लिये इस में जगह रखी। संस्कृत पढ़ाना निहायत जरूरी है। आपने यह जो लिखा है अगर इसको इम्पलीमेंट कर सकें तो मैं समझता हूं कि आप हिन्दुस्तान की, भारतवर्ष की

बहुत सेवा करेंगे । मैं अपना एक तजुर्बा बताऊं वाइस चेयरमैंन साहब, आधे मिनट में । मैं रूस गया था, वहां रूस की जो बड़ी लाइब्रेरी हैं वहां चला गया यह देखने के लिये कि हिन्दुस्तान की पुस्तकें कितनी हैं तो जहां हिन्दुस्तान की पुस्तकें रखी थीं वहां जो लाइब्रेरियन था वह रूसी था और उस ने संस्कृत में हमारा सम्बोधन किया, हम चार पांच आदमी गये हुए थे, मैं संस्कृत नहीं जानता था लेकिन और जानते थे, यों मैंने बी० ए० में संस्कृत पढ़ी है, तो मैं बड़ा परेशान हुआ कि एक रूसी जो कि हिन्दुस्तान की किताबें हैं उसका लाइब्रेरियन है और उसने संस्कृत में सम्बोधन किया और संस्कृत हमारी भाषा है, हमारे उसमें वेद हों, सारी गीता हो, रामायण हो लेकिन हम उस को भूल गये हों, हम संस्कृत न पढ़ें। जिस जमाने में मैं पढ़ता था, पंजाब का तो मुझे पता है, बाहर का पता नहीं है, लेकिन पंजाब में संस्कृत लाजमी तौर पर पढ़नी पड़ती थी।

पंजाब में या तो लाजमी तौर पर संस्कृत पढ़नी पड़ती थी या पर्शियन या अरेबिक। जब तक अंग्रेज रहे तब तक ये कम्पलसरी मजमून रहे । संस्कृत या अरेबिक या पर्शियन जब से हमारी वजारत आई है, जब से हमारा राज है, तब से संस्कृत कम्पलसरी सबजेक्ट के तौर पर हट गया है मगर पहले के वक्त में यह जरूरी था हर बच्चे के लिये पढ़ना । आपने यह जो क्लाज इसमें रखा है मैं इसके लिये आपको बहुत मुबारकबाद देता हूं बशर्ते आप उसको इम्प्लीमेंट कर सकें । अगर आप संस्कृत को पढ़ने के लिये अपनी स्कीमों को इम्प्लीमेंट करा सकें तो मैं यह समझूंगा कि आपने इस देश की वाकई सेवा की है ।

(Time bell rings)

THE VICE-CHAIRMAN (SHRI AKBAR ALI KHAN): There is no time.

श्री जगत नारायण : एक मिनट और लूंगा । यहां आपकी माइनारिटीज के लिये बहुत कुछ रखा है । मैं थोड़ा सा माइनारिटीज का सवाल आपके सामने अर्ज करूंगा । हमारे पंजाब में हिन्दी को वह हिफाजत नहीं मिल रही है । दस मील के फासले पर स्कूल की टीचिंग बदल जाती है । सच्चर फारमूला के बाद बिल्कुल लाजमी तौर पर इस बार दसवीं जमात तक गुरूमुखी सीखनी पड़ती है चाहे पेरेन्ट लिख कर दें कि हमारे बच्चे को हिन्दी पढ़ाइये । तो यहां आपने माइनारिटीज का ख्याल रखा है वहां पंजाब का भी ख्याल रखिये । वहां पंजाब में ऐसे लोग हैं जो 40 परसेन्ट तक हिन्दी को चाहने वाले हैं, इस समय टाइम नहीं है नहीं तो मैं फिगर्स लाया था आपको बताता कि अब भी यूनिवर्सिटियों में हिन्दी में ज्यादा लड़के पंजाब में पास हो रहे हैं हिन्दी सबजेक्ट लेकर। तो मैं समझता हूं कि वहां हिन्दी पढ़ने वाले माइनारिटी के जो लोग हैं उनके लिए सेफगार्ड जरूर दिलवाइये, जरूर कोशिश कीजिए दिलवाने की और अगर गवर्नमेंट उसको बदलने की कोशिश करे तो उसको बदलने मत दीजिए । हमारा वहां कोई सेफगार्ड नहीं है ।

श्री राम सहाय (मध्य प्रदेश) : उपसभाध्यक्ष महोदय, हमारे सामने कमीशन की जो रिपोर्ट है उसके साथ संसदीय समिति की रिपोर्ट दोनों विचार के लिये प्रस्तुत है । मैं कोई शिक्षा शास्त्री नहीं हूं लेकिन लगभग 35 वर्ष से मेडिकल स्कूल, हायर सेकेन्डरी स्कूल और कालेज, ग्रैजुएट कालेज इत्यादि और पोलीटेक्नीक और इंजीनियरिंग कालेज चलाने का जो अनुभव है उसके आधार पर मैं कुछ बातें आपके सामने रखूंगा ।

हिन्दी के संबंध में, श्रीमन् आपको अच्छी तरह से मालूम है कि मैं हमेशा हिन्दी में ही बोलता रहता हूं और हिन्दी का ही हामी हूं । अभी कल ही हमारे डिप्टी मिनिस्टर श्री शेरसिंह जी ने यह फर्माया था कि 100 साल

[श्री राम सहाय]

से हम बराबर यह शिकायत सुनते आ रहे हैं कि हमारे पास हिन्दी की पुस्तकें तैयार नहीं इसलिये हम हिन्दी में शिक्षा नहीं दे सकते। तो मेरा ऐसा कहना है कि हम एक गलती तो यह कर चुके हैं कि हम हिन्दी में अपनी पुस्तकें नहीं तैयार कर सके हैं लेकिन हम दूसरी गलती हिन्दी का नाम लेकर अपने बच्चों की जिंदगी को खराब न करें। जब हम हिन्दी में पुस्तकें पर्याप्त मात्रा में प्राप्त नहीं कर सकते हैं तब हमको अंग्रेजी का सहारा लेना आवश्यक है। मेरा यह अनुभव है कि हिन्दी मीडियम से सीखे हुए लड़के जब पोलीटेक्नीक या इंजीनियरिंग या मैडिकल कालेज में जाते हैं तो वहां की इंगलिश को वे फालो नहीं कर सकते हैं और न समझ सकते हैं। यहां तक हुआ है कि इंजीनियरिंग कालेज में हमको एक-टीचर इंगलिश का रखना पड़ा था। मैं आपसे अर्ज करता हूं कि जहां हमारे स्टेट में यह नियम है कि पांचवी क्लास से इंगलिश शुरु करनी चाहिये वहां हमको मजबूर होकर तीसरी क्लास से शुरू करनी पड़ती है। जब हमने देखा कि लड़के अप टु स्टेन्डर्ड नहीं आते हैं तब हमको तीसरे क्लास से अंग्रेजी शुरू करनी पड़ी और अपने प्राइवेट स्कूलों में हम तीसरे क्लास से इंगलिश शुरू करते हैं। हम यह शिकायत कर चुके हैं और अब तक की जा रही है कि हमारे पास साधन नहीं है कि हम इंगलिश की पुस्तकों का तर्जुमा कर सकें या मूल ग्रंथ उसमें निकाल सकें लेकिन इसकी वजह से हमें यह गलती नहीं करनी चाहिये कि हम लड़कों के जीवन को खराब करें और उनको इंगलिश में शिक्षा न दें। तो मेरी अर्ज यह है कि इंगलिश का दृष्टिकोण ऐसा ही होना चाहिये जैसा मैंने अर्ज किया कि जब तक हमको उसकी आवश्यकता है तब तक उसको रखना चाहिये।

इसमें कोई शक नहीं हिन्दी के बारे में हम शिकायत करते हैं कि दक्षिण के लोग हिन्दी के विरुद्ध हैं। मैं तो कहता हूं उत्तर के लोग विरुद्ध हैं। हम हाउस में ही देखते हैं, कि जो लोग हिन्दी में अच्छी तरह बोल सकते हैं वे कभी हिन्दी में बोलना पसंद नहीं करते, वे इंगलिश में बोलते हैं। जब वे ही इंगलिश में बोलते हैं तो हमारे दक्षिण के भाइयों का बेचारों का क्या कसूर है। आप में से बहुत लोग जो उत्तर भारत के रहने वाले हिन्दी स्पीकिंग एरिया वाले हैं, जब आप ही हिन्दी की कदर नहीं करते, आफिसरों को ले लीजिए, मेम्बरों को ले लीजिए, किसी को ले लीजिए, ट्रेन में बैठकर बातचीत करने के समय देख लीजिए, जब हम अंग्रेजी में बोलना पसन्द करते हैं और हिन्दी की आवश्यकता को महसूस नहीं करते जैसा कि हमें करना चाहिये तो हम दूसरों को दोष दें, यह हमारी गलती है। तो मेरा कहना है कि हमको कोई रिजिड व्यू इस मामले में नहीं लेना चाहिये और साधारण तरीके से अंग्रेजी का इस्तेमाल करना चाहिये।

इस रिपोर्ट में नेशनल काडर आफ एजुकेशन के बारे में जो एक चर्चा आई, मैं समझता हूं यह हमारे लिये बहुत ही शुभ-सूचक बातें हैं और अगर इस तरह से कार्य-क्रम चला तो निश्चय ही हम देखेंगे कि हम राष्ट्रीय भावनाओं में ओतप्रोत होंगे। मैंने यह देखा है कि हमारे यहां हमेशा से एजुकेशन में सोशल, मारल, स्प्रिचुअल और रिलीजिस शिक्षा का अभाव हमेशा ही रहा है। इस रिपोर्ट में मैंने देखा कि वे चीजें इसमें मौजूद हैं और शिक्षा के सम्बन्ध में शिक्षा शास्त्रियों ने जो विचार किया है और संसदीय समिति ने जो विचार किया है उसमें बहुत कुछ इसके बारे में नहीं मिलता लेकिन जो असली रिपोर्ट है उसमें हमें यह बात मिलती है और मुझे खुशी है इस बात की कि इसके बारे में हमारे शिक्षा मंत्री अवश्य ध्यान देंगे और इस विचार करेंगे, इन चीजों को इम्प्लीमेंट

करने का प्रयत्न करेंगे और स्टेट्स को भी वह आदेश देंगे कि इसको इम्प्लीमेंट करें।

नेशनल इन्टीग्रेशन के संबंध में मेरी अर्ज यह है कि हर एक स्टेट में यह नियम बना हुआ है कि वहीं के विद्यार्थी टेकनिकल एजुकेशन में शिक्षा पा सकते हैं। मेरे ख्याल में गलत उसूल है और इसको हमें देखना चाहिये। काउन्सिल आफ टेकनिकल एजुकेशन का मैं मैम्बर था, तब श्री चागला शिक्षा मंत्री थे और मैंने एक रिजोल्यूशन वहां पेश किया था, कि टेकनिकल शिक्षा जहां-जहां हो, इंजीनियरिंग कालेज, पोलिटेकनिक इत्यादि, वहीं हमको कुछ स्थान ऐसे सुरक्षित रखने चाहिए जिसमें कि हम स्टेट्स के बाहर के लोगों को भी जगहें दे सकें।

उपसभाध्यक्ष (श्री अकबर अली खान) : तब तो एक ही लैंगुएज रखनी पड़ेगी टेकनिकल कालेज और स्कूल में।

श्री राम सहाय : मैं पहले ही अर्ज कर चुका हूं टेकनिकल एजुकेशन में इंगलिश रहनी चाहिये। उसके बारे में अर्ज कर चुका हूं कि जब तक हम उसके लिये अपनी भाषा में पुस्तक तैयार नहीं कर सकते, जब तक हम एक स्टेट और दूसरी स्टेट के विद्यार्थियों को आपस में मिलने जुलने नहीं देंगे, उन्हें रस्म रिवाज और तौर तरीकों से वाकिफ नहीं होने देंगे तब तक कैसे काम चलेगा। तो वह सब स्टेट्स ने करीब-करीब मंजूर किया लेकिन कोई इम्प्लीमेंट करने के लिये तैयार नहीं हमने प्राइवेट कालेजेज में, इंजीनियरिंग कालेजे में यह कोशिश की कि कम से कम हमको इजाजत दे दी जाय कि हम बाहर के स्टूडेन्ट्स को कम से कम 25 फी सदी, 30 फी सदी ले सकें लेकिन उसकी हमें इजाजत नहीं मिली। तो मैं शिक्षा मंत्री से निवेदन करूंगा कि उसके बारे में खास तौर से देखें कि स्टेट्स उदा- [illegible] इस पर तवज्जह करें।

(Time bell *rings)*

एक खास बात कह देता हूं क्योंकि आपने घंटी बजा दी। हमारे यहां स्टूडेन्ट्स यूनियनों का बहुत झगड़ा चला है। यहां तक कि मामला पुलिस में चला गया। मैं देखता हूं, जितना इनडिसिपिलिन फैलता है वह इन स्टूडेन्ट्स यूनियनों से फैलता है और जो अच्छी शिक्षा उनको मिलती है उससे ज्यादा अनुशासनहीनता से उनका काम बिगड़ता है। तो इस बारे में आपको खास तौर से सोचना चाहिये कि स्टूडेन्ट्स यूनियन उस हद तक काम करें जहां तक शिक्षा का संबंध है और विद्यार्थियों के तकलीफ और आराम का संबंध है। वहां तक तो ठीक है लेकिन उसके आगे बढ़ कर स्ट्राइक की बात करें और शहर में और स्टेशन में जा कर झगड़ा करें, और यह सब स्टूडेन्ट यूनियन के नाम पर करें, तो इसके बारे में जब तक कोई ड्रास्टिक ऐक्शन नहीं लिया जायेगा, तब तक कोई काम नहीं बन सकेगा।

SHRI KRISHAN KANT (Haryana): Mr. Vice-Chairman, I first of all congratulate the Education Commission and the Parliamentary Committee for bringing out the fine reports. I hope these voluminous reports will be read sometime and implemented, maybe in one generation or two generations.

AN HON. MEMBER: After two generations?

I SHRI KRISHAN KANT: It will i *ake time. It is presumed that this i national policy on education will be I converted into programmes and then formulated into financial compulsions and made a part of the Central and State budgets, which will be put into effect to bring the programmes into action. I do not know whether these two reports will bring any revolutionary change in our educational system. But I am sure that Dr. Kothari. the Chairman of the Education Com-

[Shri Krishan Kant.]

mission and the doyen of Indian scientists and educationists, and Dr. Triguna Sen, who is an eminent engineer and educationist, are imbued with a revolutionary zeal to do something for education, and I only hope that they will impart something of that forvour to the moribund and 'ardy Indian education.

The Education Commission's report is full of generalities, broad statements, aphorisms, platitudes, etc., which are dispersed overall the pages of this report, and some of these appear to have been transferred to the Parliamentary Committee report which also contains a lot of general statements. The Parliamentay Committee differs from the Education Commission report on three important points. They have not accepted the recommendation of the Commission for the creation of 5 to 6 major universities or upgrading of the 10 per cent of the institutions at all levels to optimum standards. They ihink that better results can be obtained by maintaining minimum standards in all institutions and offering special additional assistance on the basis of proper criteria to those institutions which show a high level of performance and promise. As a student of science and logic I fail to understand what really the Parliamentary Committee means by this. What, is the meaning of minimum standards of education? What is meant by offering special additional assistance and in what way? What is the proper criterion, and when you lay you offer this assistance to those Institutions which show high level of performance and promise, are you 'iot selecting the institutions? When ihe Education Commission says that •hey would like to upgrade 10 per i lent of the institutions to optimum standards, are they not also doing the dame thing, of selecting the institutions? What indeed is then the diffe-pnco between ihp recommendation of the Parliamentary Committee and that of the Education Commission? I fail to understand. They also believe in the selection of institutions and the Parliamentary Committee also believe in the selection of institutions. The suggestion seems to be lacking in clarity.

Secondly, they say that they have placed greater emphasis on expansion of facilities than the Commission has done specially at the school stage and they have not agreed with the selective policies to be adopted at the higher secondary and under-graduate stages. I think I must congratulate the Parliamentary Committee for coming to this conclusion.

The third difference the Parliamentary Committee has with the Commission is regarding changing the administrative structure of the coming institutions and making changes in the existing ones. I think this matter should have first been considered by an expert committee and then brought to the Parliamentary Committee. What is happening now? This report will be considered by the Central Board of Secondary Education this month and by the Vice-Chancellors' Conference next month. Naturally there are experts in those bodies and they are going to criticise this report. It would have been better if the report of the expert committee had come before the Parliamentary Committee. They would have given them a report That is why the leader of the "Times of India" dated the 27th July says:

"The report of the Committee of Members of Parliament on Education is a proverbial last straw which breaks the camel's back. But since the camel in this case national education policy—is no more than a figment of the imagination, no great harm has been done. All that the report does in effect is to prove once again that there is no national consensus on educational policy. The nine minutes of dissent speak

no more than the high-minded puerilities of the main report."

I would like to ask the Education Minister before going further what mechanism, what institution he thinks he will use for implementing these recommendations of the Education Commission or the Parliamentary-Committee.

During the last ten years the record of the Ministry of Education in initiating any programme has not been very encouraging. Some would say that the whole thing was a sheer waste of money and a miserable failure and that the Education Ministry has no national. vision and clarity about it. For example, they were shouting about, as Mr. Ramachandran has said, basic education for a number of years. What has happened to that? How is it implemented? How much money lias been spent on that? I would like the Minister sometime to evoluate what has been done in this regard.

Secondly, the Education Ministry started all the 11-year schools, the multi-purpose schools, junior technical schools, and so on. What has happened to all that? They have proved a failure in all the States. Then in 1962 a Committee on emotional integration was formed which was called the Sampurnanand Committee. There were many experts on that Committee and they came to certain conclusions on policy matters on education. They gave suggestions for better co-ordination between expansion of education and employment opportunities. I would like to know what has been done about this Committee. If this is the institution or •mechanism through which Dr. Triguna Sen has to implement this report, only God save him. I would like Dr. Sen [8] and his dynamic deputy, Mr. Bhagwat Jha Azad, to impart something of that dynamism and create a new organisation or a new set-up which would really implement all the suggestions. The suggestion given about the regio- * nal language and the "medium of instruction is a very revolutionary suggestion, and unless this dynamism is brought into it, it is not possible to make the country march forward. The main difficulty will be that it will again create a mess if dynamism is not brought into it. It is only determination and dynamism which can bring about implementation of these reports.

I would like in this respect to say that one of the factors which has not been properly looked into by the Parliamentary Committee is about the question of investment on education. In para. 94 of the Report of the Committee of Members of Parliament it says: "In future the total educational expenditure of the State Governments will be much larger and may come to about 1' 3 or 112 of their total resources". I have no doubt that in aggregate the total provision for education is going to increase with the rise in national income, with the increase in productivity and with greater yield from our farms and factories. But I have doubt if any State Government can afford to spend 50 per cent of its revenue on education. That State will become bankrupt. I wish that the Committee had given better attention to it and not made such broad statements. I do not think much thought has been given to such important problems when observations are made like this, and naturally the "Times of India" said that it was all puerile recommendations.

The beauty of the report is in its interesting Minutes of Dissent which give a very happy reading. The problems raised are very importnat and the "Times of India" editorial has rightly pointed out that " the question of costs will become all the more crucial if greater emphasis is put on the development of education for agriculture and industry". Participation in productive work on the part of millions of children in schools, in the homes, in factories and farms will mean a lot of pxpenditure and cannot he

[Shri Krishan Kant.] done cheaply. It will require opening of properly equipped workshops in schools. I think the idea of the neighbourhood schools is a revolutionary idea, but it should have been worked out in more detail, because to bring about a socialist society certainly we should have this idea, but this cannot be put into practice unless we take it "more seriously and give more thought to it. I think the question of financial implications has not been properly looked into. It seems to have been left to the Planning Commission or the generations to come.

One of the very important tasks of education—which, tHe ^Parliamentary Committee has not attempted to define—is how to bridge the gap between our social environment steepea in history and the advancing frontiers of new civilisation based on science and technology. It s not a question of building houses or factories. It is a question of changing the mental climate of every Indian citizen. Our mental climate is built up with stories related to us by our mothers and elders. Our history used to be taught to us from the very childhood. Ramayana and Mahabharata built up our mental visions. They are very important. But we must not forget that they depict feuda[1] society based on agriculture. Historical stories and later on history play a great part in building up of our aims and aspirations. I lay a great stress on the history of science. The story of great scientists and great inventors should form an important part of our school education at various stages. Later on, history of science should form an integral part of all education whether scientific, technical or non-scientific. It will inform us that history is not full of kings and their armies. Histories of economic, social and political developments ai-e related to science and technology *t,nd* their application. This will bridge *hp gap and make an integrated study of human development. This will help the students to project their minds from the past to the present and future. It will psychologically prepare them for the new developing technological society. It will then naturally help in the problems which new civilizations prop up. I wish the Commission and the Committee could have given thought to the history of science.

Now, I would like to deal with the question of science policy which has been dealt with both the Commission and by the Parliamentary Committee. The science policy has inherently to be within the framework of national policies of social and economic developments and defence. It is true that the formation of the science policy is only at the rudimentary stage even in advanced countries. This is because of the inherent difficulties of the situation. The impact of fundamental discoveries in science is unpredictable because it may create altogether new and far-reaching consequences on the life and progress of the society. And secondly, science policy almost invariable goes beyond science. It involves complex political and social issues and decisions. Though the science policy is concerned with the policy about the pursuit and development of science, it is much more involved with the utilisation of science to meet national needs and goals.

The national goals which involve science range over a wide spectrum: agriculture and industry, improvement and control of environment, medical care, science education, computers and automation, population control and so on. Science policy is essentially a public policy in relation to science. I would like to quote here from the Report of the OECT3:

"In its double aspect of ^Policy in science' and 'Science in policy' the relation is at once tp chnical. economic, and political and it touches on the material, social and cultural

well being of countries, as well as on their national security and prestige. The problems it poses can be explored effectively only when professionals from all the relevant lields set themselves to think together about them, and to contribute to their solution from a common understanding. Systematic elaboration of the concept and implications of science policy would therefore seem to be an inherently inter-disciplinary task."

So, it is very necessary that there should be some mechanism, whereby the Government of India could have as competent, objective and unbiased an advice as possible on matters relating to science policy. When the resources are limited, it is all the more necessary to decide what not to do. There are a number of organisations dealing with the formulation and application of science such as the CSIR, the ICAR, the ICRR. the AEC, the UGC, the Defence Research Organisation and others concerned with science. It is a problem to see how these organisations work within the context of a national perspective and according to their responsibilities and assigned work.

The mechanism as at present is the Scientific Advisory Committee. It is composed of scientists with the Cabinet Secretary as the Chairman. Although its charter is quite comprehensive, in fact, it considers matters referred to it by the Union Cabinet or brought up by one of its members. But as it is, it lacks in a long-range programme of determining the scientific priorities and reviewing continuously the national research policy situation. It also has no means to exercise close co-ordination and sufficient control over the utilisation of the limited resources and planned execution of the enlarged science policy.

The assessment of work and evaluation of achievement of the various agencies are rather impossible. In such a situation, the relative allocation of the available slender resources between the competing agencies depends more on the pulls and prestige of the leaders of those agencies, on the current inter-nation fashion in science then on the worthwhileness of the agencies' programmes and their contribution to meet national needs.

Recently the British Government announced the establishment of the Central Advisory Committee for Science and Technology which is responsible according to them, for advising the Government on the most effective national strategy for the use and development of scientific aad technological resources. It includes professors of economics, educationists and social thinkers like the trade union leader, Mr. Frank Cousins,

In our country also it is necessary that for the proper functioning of the Committee, a major part of the memoership should belong to persons who enjoy the confidence of the scientific community but who are not themselves in charge of big science agencies or science-related departments. The Committee should also include amongst its members, economists, so-cal scientists and persons knowledgeable in the fields of industry and management. When the Committee consists largely of people who themselves are in charge of science-using agencies, it becomes almost impossible for the Committee to go into any critical discussion of problems and arrive at objective and unbiased dicisions. So, the Scientific Advisory Committee to the Cabinet needs to be thoroughly reorganised as regards its composition and functioning. The head of the science-using agencies should be associate members and should not participate in decision-making. They should not be made members of the Scientific Advisory Committee. The Committee should be provided with a

[Shri Krishan Kant.]

secretariat which it does not have at present, with a self-reliant and self-generating mechanism for pursuing a planned programme of its work.

The last point is that the support for science depends much on the understanding and vision of the political leadership and on the general awareness in the country about the role, strength and limitations of science. It would serve a distinctly useful purpose if a science Report dealing with the progress of science and important questions bearing on science policy were placed annually before our Parliament. A discussion in the House on such a Report would serve a valuable purpose. The Scientific Advisory Committee could be assigned the responsibility for preparing the Report for submission to Parliament. And in this respect, I disagree with Dr. Kothari when he says that the Report should be prepared by the CSIR.

THE VICE-CHAIRMAN (SHRI AKBAR ALI KHAN): The Hfeuse stands adjourned till 11.00 A.M. tomorrow.

The House then adjourned at thirty-five minutes pastsix of the clock till eleven of the clock on Thursday, the 10th August. 1967.